उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति

(हैदरा ाद विश्वविद्यालय की एम.फिल.(हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध-प्र ंध)

2010

प्रस्तुतकर्ता

सुरेन्द्र कुमार पटेल

विभागाध्यक्ष

प्रो.रवि रं ान

अध्यक्ष, हिंदी विभाग,

हैदरा ाद विश्वविद्यालय,

हैदरा ाद - 500 046

निर्देशक

डॉ.आलोक पाण्डेय

रीडर, हिंदी विभाग,

हैदरा ाद विश्वविद्यालय,

हैदरा ाद - 500 046

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय

हैदराबाद-500 046

DEPARTMENT OF HINDI
School of Humanities,
University of Hyderabad,
Hyderabad – 500 046.

Date: .0 .2010

This is to certify that I, SURENDRA KUMAR PATEL have carried out the research embodied in the present dissertation entitled "***UDAY PRAKASH KI KAHANIYON MEIN BHOOMANDALIKARAN KI ABHIVYAKTI***", for the full period prescribed under M.Phil. ordinances of the University of Hyderabad.

I declare to the best of my knowledge that no part of this dissertation was earlier submitted for the award of research degree of any University.

Signature of the Supervisor

(Signature of the Candidate)
Name : SURENDRA KUMAR PATEL
Enrolment No.:09HHHL04

Head, Department of Hindi

Dean, School of Humanities

अनुक्रमणिका

	पृष्ठ सं.
भूमिका	I-III
प्रथम अध्याय उदय प्रकाश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	1- 13
द्वितीय अध्याय भूमंडलीकरण की अवधारणा	14- 44
तृतीय अध्याय हिंदी कहानियाँ और भूमंडलीकरण	45- 72
ातुर्थ अध्याय उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति	73- 114
उपसंहार	115- 118
संदर्भ ग्रंथ सू ी	119- 121

भूमिका

कहानी साहित्य का प्रा ीनतम् रूप है। गल्प, किस्सागोई और वार्ता कथाओं एवं पौराणिक आख्यानों के रूप में वह मानव समा ा के विकास के साथ ि रकाल से निरंतर यात्रा करती हुई ाली आ रही है। प्रारंभ में किस्सागोई मनोरं ान मात्र की वस्तु सम ाी ाती थी। आरंभिक दौर में इसका स्वरूप मौखिक था। वे दंत कथाओं के रूप में समा ा में प्र ालित थीं। पशु-पक्षी, नदी-पहाड़, देवी-देवता को लेकर लोक में अनगिनत दंत कथाएँ मौ ाूद थी।

समा ा के विकास के साथ कहानी का विकास भी ाुड़ा हुआ है। साहित्य समा ा का सह ार होने के कारण ये दंत कथाएँ धीरे-धीरे अपने स्वरूप को समय एवं समा ा के अनुरूप ालने लगी। इस प्रकार कहानी मनोरं ान मात्र का आवरण छोड़ समा ा के खुरदुरे यथार्थ से टकराने लगी। अब वे कल्पना लोक की वस्तु न होकर सामान्य ान ाीवन के सुख-दुःख, राग-विराग, हास-परिहास की अभिव्यक्ति मानी ााने लगी। प्रकारांतर से ाो कहानी अपने आरंभिक रूप में मनोरं ान की वस्तु मात्र थी वह कालांतर में अपने लिखित रूप में ाीवन की आलो ाना बन गई। सर्वविदित है कि माता-पिता अथवा दादा-दादी से कहानियाँ सुनकर न ााने कितने लोगों में वीरता, देश प्रेम व आत्म परिष्कार के भाव ाागृत हुए ि ान्होंने अपने कर्म से इतिहास को बदल दिया।

आ ा ाब हम 21 वीं सदी की भावभूमि पर खड़े होकर समा ा के साथ कहानी की विकास यात्रा को देखते हैं तब उसका महत्त्व सम ा में आता है। सामंतवाद के खिलाफ सैकड़ों कहानियों का अम्बार लगाने वाले प्रेम ांद भी यह सम ाते थे कि समा ा की छोटी-छोटी तरल भावानुभूतियों का ि ात्र खीं ाने के लिए कहानी से उपयुक्त विधा कोई और नहीं हो सकती। पहले कहानियों की तुलना एकांकी नाटकों से की ााती थी पर अब ये बात बेमानी साबित हो ाुकी है। कहानी छोटे शिल्प विधान के बाव ाूद अपनी व्यंग्यात्मकता, प्रतीकात्मकता एवं फंतासी स्वरूप के

कारण समा ा के यथार्थ का गहराई के साथ समग्रता में अवलोकन करती है। उदय प्रकाश की कहानियाँ इस तथ्य की मिसाल हैं।

उदय प्रकाश की कहानियाँ छोटी मुँह बड़ी बात कहती हैं। उनकी कहानियों का स्वर एक नहीं अनेक है। आरंभ से कहानी प . ने का आकांक्षी होने के कारण इस विधा से मेरा गहरा लगाव होना स्वाभाविक है। ब ापन से प्रेम ंद की कहानियाँ प . ता आ रहा हूँ, पर उदय प्रकाश की कहानियाँ विषय वैविध्यता और अपने फंतासी स्वरूप के कारण न केवल अपनी ओर आकर्षित करती हैं अपितु ाैंकाती भी हैं। ि ास प्रकार छायावादी दौर में प्रेम ंद ने सामंतवाद का घोर विरोध किया था ठीक उसी प्रकार वर्तमान दौर में उदय प्रकाश भूमंडलीकरण का करते हैं।

भूमंडलीकरण समकालीन दौर की सबसे वलंत समस्या है, ि ासे टकराना प्रत्येक साहित्यकार का दायित्व है। उदय प्रकाश की कहानियाँ भूमंडलीकरण का ाीवंत दस्तावे ा है। भूमंडलीकरण पर लिखने वाले समकालीन कहानीकारों में उदय प्रकाश सबसे बड़े हस्ताक्षर हैं। कहानियाँ सामाि ाक समस्याओं से न केवल टकराती हैं, बल्कि उि ात समाधान भी खो ाती हैं। वर्तमान समा ा के भूमंडलीय यथार्थ को ाानने-सम ाने की सबसे बड़ी कुं ाी उदय प्रकाश की कहानियाँ है।

प्रत्येक व्यक्ति में अपने समय एवं समा ा को ाानने-सम ाने की तीव्र बे ाैनी एवं उत्कंठा होती है। इसी बे ाैनी एवं उत्कंठा ने मु ो 'उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति' ाैसे शोध विषय के ाुनाव हेतु प्रेरित किया। लघु यह शोध प्रबंध ाार अध्यायों और उपसंहार में विभक्त है।

प्रथम अध्याय 'कहानीकार उदय प्रकाश का व्यक्तित्व एवं कृतित्व' के अंतर्गत लेखक का संक्षिप्त ाीवन परि ाय देते हुए उनकी लेखकीय प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही प्रमुख कृतियों का परि ायात्मक विवरण दिया गया है।

द्वितीय अध्याय 'भूमंडलीकरण की अवधारणा' के अंतर्गत भूमंडलीकरण के अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। साथ ही समा ा एवं साहित्य पर पड़नेवाले उसके प्रभावों की ा ार्ा भी की गई है।

तृतीय अध्याय 'हिंदी कहानियाँ और भूमंडलीकरण' के अंतर्गत यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि भूमंडलीकरण का प्रारंभ हिंदी कहानियों में कब और कैसे हुआ तथा यह भी स्पष्ट करने की पुर ोर कोशिश की गई है कि भूमंडलीकरण का प्रभाव हिंदी कहानियों में किन-किन रूपों में व्यक्त हुआ है।

ातुर्थ अध्याय 'उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति' के अंतर्गत यह देखने-परखने की कोशिश की गयी है कि लेखक की कहानियाँ ो भूमंडलीय यथार्थ का ीवंत दस्तावे ा है में भूमंडलीकरण किन-किन रूपों में अभिव्यक्त हुआ है। साथ में यह भी देखने का प्रयास किया गया है कि इन कहानियों में सामा िाक ीवन किस रूप में व्यक्त हुआ है।

'उपसंहार' के अंतर्गत सभी अध्यायों से प्राप्त निष्कर्ष को रखा गया है। शोध प्रबंध के अंत में संदर्भ ग्रंथ सू ाी का विवरण दिया गया है।

प्रस्तुत शोध कार्य को करते हुए मैं अपने शोध निदेशक डॉ.आलोक पाण्डेय, रीडर, हिंदी विभाग का विशेष आभारी हूँ, िान्होंने प्रस्तुत शोध विषय के ायन से लेकर समापन तक समय-समय पर उ ाित मार्गदर्शन एवं प्रेरणा दी। भाषाई त्रुटियों एवं हैंडराइटिंग के सुधार हेतु सर द्वारा दी गई हिदायतें आ ाीवन नहीं भूलेंगी, क्योंकि इससे मेरे लेखन में निरंतर सुधार हुआ है।

मैं अपने परिवार के समस्त सदस्यों के प्रति सहृदय आभार व्यक्त करता हूँ िान्होंने मु ो इस स्तर की शिक्षा प्राप्त करने का समु ाित अवसर प्रदान किया।

अंत में उन सभी लेखकों, विद्वानों, मित्रों और सुधी ानों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ िानकी सहायता के बिना यह शोध प्रबंध संभव नहीं बन पाता।

दिनांकः .0 .2010 **सुरेन्द्र कुमार पटेल**

स्थान : हैदराबाद

प्रथम अध्याय

उदय प्रकाश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रथम अध्याय

उदय प्रकाश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

वर्तमान समय के बहु ार्ित कहानीकार उदय प्रकाश का ान्म 1 ानवरी 1952 ई. में मध्य प्रदेश के ि ला शहडोल- ाो अब अनूपपुर के नाम से ााना ााता है, के एक छोटे से गाँव ‘सीतापुर’ में हुआ था। इनका ब ापन नाम (प्रकाश) के विपरीत अंधकार में बीता। 12 साल की अल्पायु अर्थात् 1964 ई. में ही माँ का देहावसान कैंसर रोग से हो गया। 5 वर्ष बाद अर्थात् 1969 ई. में पिता की भी मृत्यु कैंसर के कारण हुई। अभावों में ाीवन और व्यक्तित्व ि तना निखरता है उतना सुख और समृद्धि में नहीं, उदय प्रकाश का ाीवन इसका मिसाल है। उदय प्रकाश ाी में ाीवटता ब ापन से ही थी। माँ-बाप का सहारा उठ ााने के बाद समस्त दायित्व का बो ा नि ा कंधों पर आ गया। यदि ाीने की इ छा (ि ाीविषा) और ाीतने की इ छा (ि ागीषा) दिल और दिमाग में हो तो कोई भी राह आसान हो ााती है। ऊँ ाा व्यक्तित्व किसी अवलंब का मोहता ा नहीं होता है। कठोर परिश्रम एवं लगन का ही परिणाम था कि इन्होंने विज्ञान विषय में स्नातक और हिंदी साहित्य में आ ाार्य नंददुलारे वा ापेयी ‘स्वर्ण पदक’ के साथ सागर विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की परीक्षा उत्तीर्ण की। उदय प्रकाश ने ावाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली (ो.एन.यू.) में अपना शोध-कार्य पूरा किया। इन्होंने ावाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय और इसके मणिपुर केंद्र में लगभग 4 वर्ष तक अध्यापन कार्य भी किया। संस्कृति विभाग, मध्य प्रदेश, भोपाल में लगभग 2 वर्ष विशेष कर्त्तव्यस्थ अधिकारी का पद सुशोभित किया। इसी समय भोपाल से निकलने वाली साहित्यिक पत्रिका ‘पूर्वग्रह’ के सहायक संपादक नियुक्त हुए। नौ वर्षों तक टाइम्स ऑफ इंडिया के समा ाार पाक्षिक ‘दिनमान’ के संपादकीय विभाग में नौकरी की। बी ा में एक वर्ष

टाइम्स रिस ा फाउंडेशन के स्कूल ऑफ सोशल ार्नलि म में अध्यापन। लगभग दो वर्ष पी.टी.आई. (टेलीवी ान) और एक वर्ष इंडिपेंट टेलीवी ान में वि ाार और पटकथा प्रमुख रहे। बाद में कुछ समय 'संडे मेल' में वरिष्ठ सहायक संपादक का कार्य किया। संप्रति स्वतंत्र लेखन तथा फिल्म और मीडिया के लिए लेखन।

उदय प्रकाश एक ा ाि ति कवि, कहानीकार, पत्रकार एवं फिल्मकार हैं। इनकी बहुसंख्य कृतियों का अंग्रेज़ी, ार्मनी, ाापानी एवं अन्य अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है। लगभग समस्त भारतीय भाषाओं में इनकी र ानाएँ अनूदित हैं। इनकी कई कहानियों का नाट्य रूपांतर और सफल मं ान भी हुआ है। 'उपरांत' और 'मोहनदास' के नाम से आपकी कहानियों पर फी ार-फिल्म भी बनी है। ािसे अंतर्राष्ट्रीय सम्मान भी प्राप्त हुए हैं। उदय प्रकाश स्वयं भी कई टी.वी. धारावाहिकों के निर्देशक-पटकथाकार रह ाुके हैं।

उनके द्वारा र ाित कृतियाँ इस प्रकार हैं-

'सुनो कारीगर' (1980), 'अबूतर-कबूतर' (1984), 'रात में हारमोनियम' (1998), 'एक भाषा हुआ करती है' (2009) (कविता संग्रह) 'तिरिछ', 'दरियाई घोडा' (1989), 'और अंत में प्रार्थना' (1994), 'पाल गोमरा का स्कूटर' (1997), 'पीली छतरी वाली लड़की' (2001), 'दत्तात्रेय के दुख' (2002), 'अरेबा परेबा', 'मोहनदास', 'मैंगोसिल', (कहानी संग्रह)। 'ईश्वर की आँख', 'अपनी उनकी बात' और 'नई सदी का पं ातंत्र' (निबंध, आलो ाना, साक्षात्कारों का संकलन)।

अन्य भाषाओं में पुस्तकें-

'Short shorts long shots', 'Rage Revelry and Romance', 'A girl with golden parasol' (Awarded Pen grant, USA 2005) (English), 'Golden Gruentel' (German).

उदय प्रकाश की प्रसिद्ध कहानी 'पीली छतरी वाली लड़की' का उर्दू अनुवाद हुआ है। 'तिरिछ आणि इतर कथा', 'अरेबा-परेबा' (मराठी), एवं 'मोहनदास' का

कन्नड़ भाषा में अनुवाद हुआ है और 'मोहनदास' का पं ााबी, उड़िया और अंग्रेज़ी में शीघ्र पुस्तकाकार प्रकाश्य।

उदय प्रकाश के द्वारा अनूदित पुस्तकें हैं-

'लाल घास पर नीले घोड़े' (मिखाइल शात्रेव के नाटक का अनुवाद और रूपांतर), 'कला अनुभव' (प्रो.हरियन्ना की सौंदर्य शास्त्रीय पुस्तक का अनुवाद), 'इंदिरा गांधी की आखरी लड़ाई' (बी.बी.सी.संवाददाता मार्कटली सतीश ौकब की किताब का हिंदी अनुवाद), 'रोम्यां रोला का भारत' (आंशिक अनुवाद और संपादन)।

उदय प्रकाश ी को उत्कृष्ट लेखन के लिए कई पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। वे पुरस्कार हैं-

'भारत भूषण अग्रवाल' पुरस्कार (1980), 'ओम प्रकाश साहित्य' सम्मान (1982), 'श्रीकांत वर्मा स्मृति' पुरस्कार (1992), 'मुक्तिबोध' पुरस्कार (1996), 'साहित्यकार' सम्मान, 'हिंदी अकादमी' दिल्ली (1999), 'रामकृष्ण ायदयाल सद्भावना' सम्मान (1997), 'पहल' सम्मान (2003), 'तथाक्रम' सम्मान (2005), 'पुश्किन' सम्मान (2006), 'द्वि ादेव' सम्मान (2006-07), 'पुरस्कार आर्गेनाइ ेशन ऑफ हॉरमेनी एंड फ्रेटर्निटी' (1997)।

उदय प्रकाश समकालीन कवियों में महत्वपूर्ण कवि के रूप में ाने ाते हैं। उदय प्रकाश अपने लेखन का आरंभ कविता से करते हैं, पर उन्होंने अपना समू ा विकास इधर कहानीकार के रूप में किया है, इसलिए उन्हें संस्कार से कवि और व्यवहार से कहानीकार कहा ाता है। एक कहानीकार के रूप में उन्होंने कहानी के प्र ालित ाँ ो को तोड़कर एक नयी राह बनाने की कोशिश की है। कहने की आवश्यकता नहीं कि उन्हें इस विधा में कितनी ख्याति मिली है। कविता को उनका प्रस्थान बिंदु और कहानी को विकास बिंदु माना ा सकता है। कहानी लेखन में अधिक रमने के कारण कविताएँ दबी-छुपी रही हैं। लेकिन साहित्य मर्मज्ञ ानते हैं कि उनकी कहानियों के संवेदन सूत्र कविताओं से ही विकसित हुए हैं। उनकी कविताओं एवं कहानियों का संक्षिप्त परि ायात्मक विवरण इस प्रकार हैं-

सुनो कारीगर : सन् 1980 ई. में प्रकाशित उदय प्रकाश का प्रथम काव्य संग्रह है ो वाणी प्रकाशन, 21 ए, दरियागं ा, नई दिल्ली से प्रकाशित है। इसमें कुल 35-36 कविताएँ संकलित हैं। इस संग्रह की कविताओं में स्थानीयता और सह ाता का कोमल स्पर्श देखने को मिलता है। यहाँ 'कारीगर' कोई अन्य नहीं स्वयं म ादूर वर्ग है। इस संग्रह की कविताओं में मानवीय संवेदना की ो गहरी अनुभूति दिखाई देती है वह कहीं सपाटबयानी तो कहीं फैंटेसी का आधार ग्रहण कर व्यंग्य के रूप में व्यक्त हुई है। 'सुनो कारीगर' कविता में उदय प्रकाश 'कारीगर' को संबोधित करते हुए कहते हैं कि इनका कवि अकेला, थका हारा था, लेकिन कारीगर से परि ाय के बाद कवि की नींद टूटी है, कवि का दुःख अब सिर्फ अपना नहीं रह गया है-

"मैं एक अकेला
थका हारा कवि
कुछ भी नहीं हूँ अकेला
मेरी छोड़ी गई अधूरी लड़ाइयाँ
मु ो और थका देगी।
x x x
 ालने से पहले
एक बार और पुकारो मु ो
मैं तुम्हारे साथ हूँ।"[1]

इस संग्रह की कविता 'अनुकपुर ंक्शन' केवल सामा िक यथार्थ और खलासियों की स्थिति का ित्रण मात्र नहीं अपितु वर्तमान शासनतंत्र पर करारा व्यंग्य है। एक व्यक्ति ो समू े देश के प्रति िंतित है, उसके विषय में सो ानेवाला न तो समा ा है और न ही सरकार है-

"कोई नहीं सो ाता
खलासियों के बारे में
लेकिन खलासी सो ाते रहते हैं

सबके बारे में।"[2]

उदय प्रकाश की मानवीय संवेदना मह ा व्यष्टि मूलक नहीं वरन् समष्टि मूलक है। उन्हें ि ांता है ामीन ब ा लेने की, ांगल की और उसमें रहनेवाले ीव ांतुओं की ि ांता है प्रदूषण की, वर्षा न होने से बे ैन किसानों की-

"बाद में पिता
गायब हो गये
कहते हैं खेत, कुदाल,
बैल, इमारतें, ईंट, दरवा ो, बा ार
उन्हें प ा गये।"[3]

इस तरह स्पष्ट हो ाता है कि 'सुनो कारीगर' कविता संग्रह की कविताएँ ाहाँ एक ओर सामा ाक, आर्थिक और रा ानैतिक अंतर्विरोधों को उ ागर करती हैं, वहीं दूसरी ओर कवि की नि ाी पीड़ा और संघर्ष का पर्यावसान् मानवीय पीड़ा एवं मानवीय संघर्ष में होता दिखाई पड़ता है, ठीक अज्ञेय की कविता 'नदी के द्वीप' की तरह।

'**अबूतर-कबूतर**' : सन् 1984 ई. में वाणी प्रकाशन, दरियागं ा, नई दिल्ली से प्रकाशित उदय प्रकाश ाी का दूसरा काव्य संग्रह है। इस संग्रह की समस्त कविताओं को स्वयं लेखक ने तीन भागों (पसली का दर्द, अबूतर-कबूतर तथा करीमन और अशर्फी) में बांटा है। इस संग्रह की कविताओं में भरी-पूरी गृहस्थी है ािसमें एक ओर परि ानों को लेकर यादें और ि ांताएँ हैं तो दूसरी ओर दोस्त और दुश्मन के व्यवहारों का आकलन है। उनका कविता-संसार केवल व्यक्तिगत प्रसंगों तक ही सीमित नहीं है वरन् आम- ान के संसार को भी अर्थपूर्ण विस्तार प्रदान करता है। उनकी कविताओं में ब ाों को न प.ा-लिखा पाने की अकुलाहट सह ा ही माता-पिता के दिलों में देखी ाा सकती है-

"मैं तुम्हें एक हलकी सी थपकी के सिवा
एक ाालू सी प.ाई
सादे से खाने के सिवा

और कुछ नहीं दे सकता।"[4]

उदय प्रकाश ने शासन व्यवस्था, रा ा सत्ता, शोषण तंत्र और तानाशाही प्रवृत्तियों के खिलाफ भी काफी कविताएँ लिखी हैं-'तानाशाही की खो ा', 'मदारी का खेल', ' ौथा शेर', 'रा ासत्ता', 'महा ानो येन गतः' 'सरकारी कोयल' ऐसी ही कविताएँ हैं। ' ौथा शेर', 'रा ासत्ता', 'महा ानो येनगतः' में सत्ता के शोषण और कुव्यवस्था का पर्दाफाश किया गया है-

"बीस मारे गये कर्नाटक में
बिहार में तीस
बंगाल में ालीस, पं ाब में प ास
लोग मारे मरे
लोग लापता हुए
लोगों ने आत्महत्याएँ की, लोग निकाले गये
लोग छाँटे गए
लोगों ने सब कुछ गँवाया।"[5]

रात में हारमोनियमः लंबे अंतराल के बाद प्रकाशित हुआ िसमें सन् 1984 से 1998 ई. के बी ा लिखी गयी कविताएँ संकलित हैं। इस संग्रह की अधिसंख्य कविताएँ पहल, इंडिया-टुडे, ानसत्ता, नवभारत-टाइम्स, उद्भावना, वर्तमान साहित्य, नया पथ आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो ुकी है। इस संग्रह की कविताओं का ायन संकलन और प्रकाशन संस्कृति-विभाग, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार की वरिष्ठ छात्रवृत्ति 1997-99 के अंतर्गत किया गया। इसमें छोटी बड़ी कुल 65 कविताएँ संकलित हैं।

उनके पहले संग्रह ने िस 'स्थानीयता' को विकसित किया था और सामा िक कर्म की कविता की ओर अपना रुख कायम किया था। वह कमोवेश इस संग्रह में भी मौ ूद है, पर 'रात में हारमोनियम' में उदय प्रकाश का 'श्रम से संगीत' की ओर प्रस्थान हुआ है, ाहाँ सूक्ष्मता अधिक प्रभावी है, यहाँ उनकी कविता स्थानीयता से

छूटकर अपने समय समा ा रा ानीति और संस्कृति के वर्तमान सवालों से उल ा गयी है।

भाषा के मर्म के प्रति सह ा पाठक देख सकते हैं कि कविता गद्य से कितना काम लेती है और गद्य में कितनी कविता छिपी होती है। एक स्थायी अ-नागरिकता की ठेठ देसी भंगिमा भाषा के ादुई तत्व को नए ंग से संप्रेषणीय बनाती है। यदि केदारनाथ सिंह ैसे कवि को लगता है कि उदय प्रकाश की कहानियों के ादुई संसार में प्रवेश करने की सबसे विश्वसनीय कुं ी उनकी कविताओं के पास है तो इसका विलोम भी उतना ही स ा है। याद करें उदय प्रकाश की कहानियों के कुछ स्थल तो इसका एहसास और अधिक गहरा होगा-"हमारे सबके भीतर एक-एक खाली खेत है। गेहूँ के कटे हुए ठूँठ हैं। सूखे हुए, पीले पुआल या भूसा। हवा आती है तो पुआल के तिनके उड़ते हैं और एक अवसाद कुछ गहरा हो ाता है।"[6] बहुत उदाहरण देना ारूरी नहीं और खो ाबीन करके यह बताना भी मुनासिब नहीं है कि एक बी ा-तत्व या बी ा-अभिप्राय है ाो सब कहीं उदय प्रकाश का एक बिंब बनाता है। महत्वपूर्ण यह है कि एक उदय प्रकाश में कई उदय प्रकाश हैं।

एक 'मैं' में 'कई मैं'। इसी अर्थ में उनकी कविता कोई एक साँ ाा नहीं बनाती है, न ही किसी निश्ि ात प्रतिमान को मूल्यांकन के लिए पर्याप्त मानती है। उन्हीं की कविता है 'दशहरी आम' और उन्हीं की कविता है-'रात में छूट गया हारमोनियम' और उन्हीं की कविता है-'कौए और लेखक का दिल्ली में देहांत', 'दशहरी आम' में प्रकृति का ाटक रंग है ाो ाीवन रस की अनूठी प्रतीति है। यही है ाीवन-राग। राग में स्पर्श, गंध और स्वाद-

"कन्ना दी और दित्ता बुआ के घड़े का
सबसे ठंडा पानी
ुराती हैं ाड़ें ािसे
धरती के अंधेरे में रेंगकर।"
"दूर पहाड़ों के ऊपर बैठकर
मानसून ने देखा है पोसा है इसे

इसके भीतर

खाने लायक

पीला कपास है

मीठा।"[7]

यह अगर उदय प्रकाश के काव्य अनुभव का एक रंग है तो दूसरा रघुवीर सहाय के निकट का 'ब्लैक ह्येमर' वाला रंग/व्यंग्य विनोद/क्रीड़ा वृत्ति।

उदय प्रकाश की कविताओं में लोक का ाटक रंग देखने को मिलता है। ऐसे में हमें उनकी 'उ ाला' और 'परछाई' कविता को प . ना ाहिए।

"हम होंगे हवा अपने शरीर में भरकर तुम्हारी साँस

किसी डाल को ोर- ोर से हिलाएंगे

कि मन बँटे तुम्हारा

घर में बटलोई में स्वाद होकर उबलेंगे हम

धुआ बनकर ा.ेंगे मुँडेरों पर

रास्ते में पोखरी का ठंडा-मीठा पानी होकर

मेटेंगे तुम्हारी प्यास।"[8]

इस प्रकार हम देखते हैं कि उदय प्रकाश की कविता उत्तर आधुनिक समय के ादुई यथार्थ और फंतासी तथा अतियथार्थवाद की कला के साथ-साथ लोक ीवन की ठेठ देश ा रूप-रंग, स्पर्श-गंध को भी ब ाए हुए है।

उदय प्रकाश हिंदी के एक महत्वपूर्ण कवि होने के साथ-साथ अप्रतिम कहानीकार भी हैं। एक कहानीकार के रूप में वे इतने ा ि ति हुए हैं कि उनके स ा कि के दूसरे पक्षों की अनदेखी तक हुई है। उदय प्रकाश परंपरागत शिल्प, भाषा और समू ी संर ाना में तोड़-फोड़ करके ो कहानियाँ निर्मित करते हैं उनकी हिंदी में स्पष्टतः कोई परंपरा नहीं है। यह उनकी प्रतिभा की उदात्तता का और यथार्थ को भेदने वाली अंतर्यामी दृष्टि का पराक्रम है। 'तिरिछ', 'राम स ीवन की प्रेम कथा' 'और अंत में प्रार्थना', 'पाल गोमरा का स्कूटर', 'वारेन हेस्टिंग्स का सांड', 'छप्पन तोले की करधन', 'पीली छतरी वाली लड़की', 'दिल्ली की दीवार', 'मैंगोसिल',

‘दत्तात्रेय के दुख’, ‘अरेबा-परेबा’, ‘दरियाई घोड़ा’ और ‘मोहनदास’ सरीखी कहानियाँ कोई एक व्यक्ति लिख सकता है, यह सहसा यकीन नहीं होता। अपने समय के यथार्थ की इतनी गहरी पकड़ और उसके बर्ताव का ऐसा स्थापत्य हिंदी के किसी भी कहानीकार में शायद नहीं है। कहानियों में शिल्प के निरंतर बदलते प्रयोगों में वे ऐसे ीवंत ारित्रों की स ना करते हैं िसकी स्मृति कभी ेतना से ओ ल नहीं हो पाती।

तिरिछ (1989): यह उदय प्रकाश का पहला कहानी संग्रह है। वाणी प्रकाशन नई दिल्ली से प्रकाशित इस कहानी संग्रह में आत्म कथात्मक कहानियाँ हैं। दस कहानियों के इस संकलन में ‘तिरिछ’, ‘नेलकटर’, ‘अपराध’, ‘छप्पन तोले की करधन’ को आत्मकथात्मक कहानियाँ कहा ा सकता है। ‘तिरिछ’ एक प्रतीक है। आ के समा में व्याप्त आतंकमय-संत्रास का िससे कहानीकार भी स्वयं डरता है।

वह केवल ानवर-विशेष ही नहीं अपितु आ की अमानवीयता का भी परि ायक है। तिरिछ के सहारे वे गाँव और शहर का रंगीन ित्र प्रस्तुत करते हैं। हर व्यक्ति डॉक्टर बनता है। गाँव, शहर में पहुँ ाकर किस प्रकार अमानवीय बन ाता है, इसका उदाहरण है-‘तिरिछ’।

दरियाई घोडा : 1989 ई. में वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित दूसरा कहानी संग्रह है। इसमें कुल 7 कहानियाँ संकलित हैं। इन कहानियों का मूल सरोकार ग्रामीण परिवेश से है। इसमें यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार शासन व्यवस्था गरीब नता को धोखे में रखकर अमीर लोगों का सहयोग और समर्थन करती है। ‘दद्दू तिवारी:गणनाधिकारी’ और ‘टेप ू’ कहानी इसके प्रमाण हैं।

और अंत में प्रार्थना : 1994 में वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित इस कहानी संग्रह में लगभग 25 कहानियाँ संकलित हैं। इस संग्रह की कहानियाँ विषय वैविध्य लिए हुई है। ‘और अंत में प्रार्थना’ कहानी शासन-व्यवस्था की असलियत को पूरी तरह बेपर्द करती है। यह एक ऐसी कहानी है िसमें एक नहीं

ह ार मिथ टूटते हैं। संघ और हिंदूवादी दल ो कल तक नये मानवीय मूल्यों की स्थापना, भ्रष्ट-शासन-व्यवस्था को बदल डालने का नारा देते रहे, वे ही रा नीतिक सत्ता में आते ही प्रशासनिक सत्ता की मदद करने लगते हैं।

पाल गोमरा का स्कूटर (1997) : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित इस कहानी संग्रह में 4 कहानियाँ संकलित हैं। 'पॉल गोमरा का स्कूटर', 'छतरियाँ', 'भाई का सत्याग्रह' और 'वारेन हिस्टिंग्स का साँड'। 'पॉल गोमरा का स्कूटर' का ब्लर्व लिखते हुए उदय प्रकाश के बारे में कथाकार पंक ा सिंह ने ठीक ही लिखा है-"उदय का अप्रतिम नि ीपन उन ारित्रों और प्रसंगों के साथ आता है ो स्वप्न, लोक ीवन के रंग, यथार्थ, इतिहास, मिथकों और संस्कृतियों में आवा- ाही करते हुए हमारी स्मृति और संवेदना में अपनी रलमल उपस्थिति महसूस कराने लगे हैं।"[9]

पीली छतरी वाली लड़की (2001) : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित एक लंबी कहानी है। यह कहानी शिल्प की दृष्टि से कहानी और विस्तार की दृष्टि से उपन्यास दिखाई देती है। यद्यपि लेखक ने इसे कहानी ही स्वीकार किया है। कहानी शैक्षिक ागत के साथ रा नीतिक और प्रशासनिक ागत की असलियत को उ ागर करती है। साथ ही अत्याधुनिक भूमंडलीय परिवेश, बा ारवादी अमानवीय भावना के दृश्य, गुंडागर्दी आदि को कथा-वस्तु का हिस्सा बनाया है। वस्तुतः कहानी का मूल ब्राह्मण कन्या अं ली का दलित युवक राहुल के साथ भागना है, किंतु ये दोनों ारित्र कहानी में गौण हो ाते हैं। अन्य घटनाएँ प्रधान हो गयी हैं।

दत्तात्रेय के दुःख (2002): वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित इस कहानी संग्रह में 15-16 कहानियाँ संकलित हैं। यह कहानी संग्रह दिल्ली तथा े.एन.यू. कैंपस की रा नीतिक, सामा िक हल ल को लेकर लिखी गयी है। इनकी कहानियों के विषय में राखी सेठी 'दत्तात्रेय के दुःख' कहानी संग्रह का ब्लर्व लिखते हुए कहते हैं-"उनकी कहानियाँ साहित्यिक ागत में ितनी प्रासंगिक हैं, समा ाशास्त्रीय अध्ययन की दृष्टि से भी वे एक प्रबुद्ध स ेत र ानाकार की कलम से

निकली अपने समय का प्रामाणिक दस्तावे ा है। ... उनमें मुक्तिबोध ैसी बे ैनी और परसाई ैसी तटस्थता है।"[10]

मोहनदास (2006) : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तकाकार यह कहानी अस्मिता और अस्तित्व दोनों को ब ाने की संघर्ष गाथा है। यह कहानी वर्तमान समा ा व्यवस्था और दलित ीवन की संघर्ष कथा को प्रस्तुत करती है। मोहनदास दलित है, उसके पास प्रथम श्रेणी पास सर्टिफिकेट भी है। लेकिन उसके स्थान पर थर्ड डिग्री पास व्यक्ति उसी के नाम से नौकरी करता है। शासन-व्यवस्था भी इसके खिलाफ कोई आवाज़ नहीं उठाता। मोहनदास कहानी वर्तमान शासन व्यवस्था की खोखली रणनीतियों को न केवल उ ागर करती है बल्कि समा ा के खुरदरे यथार्थ को भी गहराई से पकड़ती है।

उदय प्रकाश की कहानियों के विषय में कुमार कृष्ण का कहना है "कौन कहता है कि कहानियों के पेड़ नहीं हुआ करते, होते हैं। उदय ने अपनी कहानियों को उन पेड़ों पर से तोड़ा है, ैसे हम सेब, आम तोड़ते हैं। उदय की कहानियों के पेड़ न तो रूस के ंगलों में हैं, न ीन में, न र्मनी के ंगलों में न स्पेन में। वे आ ा के डरावने में उगे पेड़ हैं ाहाँ से उदय अमरूद की तरह अनगिनत बी ा वाली कहानियाँ तोड़ते हैं। इन कहानियों में उनकी कविताएँ अंतर्निहित हैं, ो रात में हारमोनियम की तरह ब ाती हैं और मनुष्य के भीतर की रिक्तता को भरती है। फिर भी कुछ लोग हैं ो ‘ ोखी’ (वारेन हेस्टिंग्स का साँड) के मरने और तिरिछ द्वारा काटे हुए पिता की ट्रे ाडी पर ोर से हँसते हैं। ... वे शायद नहीं ानते कि दरियाई घोड़ा ाब मरता है तो कितना छटपटाता है।"[11]

निष्कर्षतः कहा ा सकता है कि उदय प्रकाश का ीवन वैविध्यपूर्ण होने के कारण उनकी कहानियों का स्वर भी वैविध्यपूर्ण है। उदय प्रकाश का कहानीकार अपने समय की विभीषिकाओं से टकराता हुआ उस ‘आस्था’ और श्रद्धा की खो ा का कहानीकार है िसके अवमूल्यन ने हमारी मनुष्यता को नष्ट कर दिया है। उदय प्रकाश व्यक्ति और समा ा की आत्मा के स र्क हैं इसीलिए घटनाएँ उनकी कहानियों का प्राण नहीं, प्राण है उनकी सत्यता को थाहने की साधना और यही कारण है कि

उनकी कहानियों के ारित्र प्रदत्त स्थितियों से लड़ते हुए भी निरंतर यातना और मर्मान्तक क्षणों को भोगते हुए भी अपनी आत्मा से बे ार नहीं होते। ‘वस्तु’ को उनके पूरे वितान में उठाते वे केवल ‘प्रतिरोध’ कर अपने कर्म से छुट्टी नहीं पाते, वे एक ‘सांस्कृतिक दृष्टि’ और उससे भी अधिक सर्वहितकारी ‘लोकमत’ की प्रस्तावना करते हैं। मरणासन्न किस्सा गोई को पुन ीवित कर उदय प्रकाश ने वैश्विक परिवर्तनों की अपनी समा ा और अपनी स ानात्मक प्रतिभा के मेल से एक ऐसा कहानी संसार निर्मित किया है िसका कोई विकल्प नहीं है। इस प्रकार उदय प्रकाश कल आ ा और कल के र ानाकार हैं।

* * *

संदर्भ

[1] सुनो कारीगर, उदय प्रकाश-पृ.9
[2] सुनो कारीगर, उदय प्रकाश-पृ.23
[3] सुनो कारीगर, उदय प्रकाश-पृ.16
[4] अबूतर-कबूतर, उदय प्रकाश-पृ.24
[5] अबूतर-कबूतर, उदय प्रकाश-पृ.69
[6] आलोचना जनवरी-मार्च 2001-पृ.77
[7] आलोचना जनवरी-मार्च 2001-पृ.77
[8] आलोचना जनवरी-मार्च 2001-पृ.80
[9] आलोचना जनवरी-मार्च 2004-पृ.114
[10] दत्तात्रेय के दुःख, उदय प्रकाश पृष्ठ भाग
[11] कहानी के नये प्रतिमान, डॉ.कुमार कृष्ण

द्वितीय अध्याय

भूमंडलीकरण की अवधारणा

द्वितीय अध्याय

भूमंडलीकरण की अवधारणा

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद तीसरी दुनियाँ के देशों की ही नहीं विकसित कहे ाने वाले देशों (अमेरिका, ापान, रूस, ीन) आदि की भी अर्थ-व्यवस्था पूरी तरह ारमरा गयी। तीसरी दुनिया के देशों ने धनी देशों के त र् पर उनके समक्ष आर्थिक और औद्योगिक विकास हासिल करने के उद्देश्य से इनके साथ मिलकर ते ी से विकास करने के प्रयास काफी ोर-शोर से प्रारंभ किये। उन्हें इन प्रयासों में अभूतपूर्व सफलता तो नहीं प्राप्त हो पायी, पर आंशिक सफलता रूर मिली। इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप नि ी, बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को ब़ ने का मौका प्राप्त हुआ और इन बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से न केवल बा ार आम- ान तक पहुँ ा बल्कि टेलीवी ान के माध्यम से विभिन्न देशों की संस्कृतियाँ भी परस्पर एक दूसरे के संपर्क में आई। क्रमशः इसकी व्यापकता ब़ ती गयी और इस हाइब्रिड संस्कृति, विस्तारशील बाज़ार, उद्योग एवं मीडिया ागत ने अधिसंख्य राष्ट्रों और ानता को प्रभावित करना शुरू कर दिया तो भूमंडलीकरण विशेषण हमारे सामने आया।

1970 के दशक के मध्य से दुनियाँ में एक नई किस्म की अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की शुरुआत हुई। इस नई अर्थ-व्यवस्था के मुख्य घटक थे 'मुक्त व्यापार', मुद्रा तथा पूँ ी बा ारों पर से सब प्रकार के नियंत्रण की समाप्ति, प्रत्यक्ष करों में कटौती, रा य के ख र् में कमी तथा रा य द्वारा लागू किये गये आर्थिक नियंत्रणों की समाप्ति, सार्व ानिक उद्योगों का नि ीकरण, कम्प्यूटर, इंटरनेट, बहुउद्देशीय कंपनियों की राष्ट्रीय रा ाकीय नियंत्रणों से मुक्ति। इसके साथ ही लंबे अरसे से ाले आ रहे श्रमिक वर्ग तथा मध्यवर्ग के कल्याण हेतु आंशिक समतामूलक रु ानों की समाप्ति और गांवों का शहरों की ओर पलायन। राष्ट्रीय

सीमाओं के आर्थिक मामले खत्म करने का एक नया दौर ाल निकला। इसी नयी व्यवस्था को भूमंडलीकरण कहा गया।

"पिछले दो दशकों से 'वैश्वीकरण' शब्द अधिक ा ाा में है। भूमंडलीकरण, ग्लोबलाइ ेशन, ागतीकरण, नवसाम्रा यवाद, विश्वव्यापी पूँ ीवाद, विश्वव्यापी बा ारीकरण, नव-उदारवाद, विश्वव्यापी विस्फोट आदि वैश्वीकरण के पर्याय हैं। वैश्वीकरण का बहु प्र ालित अर्थ आपस में न ादीकी और गहराई से ाुड़ा हुआ संसार होता है।"[1] पर ध्यानदेने वाली बात यह है कि यह शब्द बेशक नया है लेकिन यह ि ास प्रक्रिया को व्यक्त करता है, वह पुरानी है।

मैने ार पांडेय इस संबंध में कहते हैं-"यह प्रक्रिया यूरोप में पूँ ीवाद के ान्म के साथ ही शुरू हो गयी थी। लेकिन इस प्रकार की दो अवस्थाएँ हैं। पहली अवस्था साम्रा यवाद या उपनिवेशवाद की थी ि ासका सामना भारत ने ब्रिटिश साम्रा यवाद के रूप में किया था। इस अवस्था में यूरोप के पूं ीवादी देशों ने दुनिया के विभिन्न देशों में ााकर अपने उपनिवेश कायम किए-अफ्रीका, एशिया, लातीनी अमेरिका में, ब्रिटेन, फ्रांस, ार्मनी, स्पेन, पुर्तगाल, यूरोपीय देशों में ाहाँ- ाहाँ पूँ ीवाद का विकास हुआ, उन देशों ने अपने साम्रा य का विस्तार किया।

उन्होंने अन्य देशों को अपना उपनिवेश बनाया और वहाँ ााकर उन पर शासन किया। दूसरी अवस्था उपनिवेश समाप्त हो ााने के बाद की और विशेष रूप से सोवियत संघ के विघटन के बाद की है, ाब पूँ ीवादी देशों के लिए यह संभव हो गया कि वे दूसरे देशों में ााकर अपने उपनिवेश कायम किये बिना ही अपने साम्रा य का विस्तार कर सकें। इस दूसरी व्यवस्था का नाम ही भूमंडलीकरण है।"[2]

अतः स्पष्ट है कि भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में देश एक दूसरे पर निर्भर हो ााते हैं और लोगों के बी ा की दूरी घट ााती है। एक देश अपने विकास के लिए दूसरे देशों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए सूती कपड़े के उद्योग में महत्वपूर्ण नामों में से एक ' ाापान', भारत या अन्य देशों में पैदा हुई कपास पर निर्भर करता है। का ाू के अंतर्राष्ट्रीय बा ाार में प्रमुख भारत, अफ्रीकी देशों में पैदा हुए क ो का ाू पर निर्भर करता है। हम सभी ाानते हैं कि अमेरिका का सू ाना

प्रौद्योगिकी उद्योग किस सीमा तक भारत और अन्य विकासशील देशों के इं ीनियरों पर निर्भर करता है। भूमंडलीय अवस्था में केवल वस्तुओं और पूँ ी का ही सं ालन नहीं होता अपितु लोगों का भी सं ालन होता है।

भूमंडलीकरण कोई नई ीज़ न होते हुए भी अपने खास व्यापारिक नियमों, लक्ष्यों और अनंत विस्तार की व ह से एक अभूतपूर्व घटना है। इससे वैश्विक वित्तीय बाज़ार का उदय हुआ। टेलीवी न, इंटरनेट तथा सं ार के अन्य दूसरे माध्यमों के साथ सू ना का भूमंडलीकरण होने लगा। एक देश से दूसरे देश में सामानों के आयात-निर्यात पर लगे प्रतिबंध हटने लगे, दुनियाँ के अंतर्संबंधों में ब ़ोत्तरी के साथ-साथ गतिशीलता भी आई। इसने दुनियाँ में वित्तीय पूँ ी के किसी भी देश में आने- ाने पर लगे प्रतिबंध को मिटा दिया। देशों के हाथ बंधते गये। सरकारें नहित के अनुरूप अर्थ-व्यवस्था को नियंत्रित करने में क्षमताहीन होती गयी। यही व ह है कि इन लगभग दो दशकों में बा ार के मूल्य मनुष्य ाति की अब तक की सारी लोकतांत्रिक उपलब्धियों पर भारी है।

दरअसल 20 वीं शती के शुरुआती दशकों से ही मनुष्य को आर्थिक मनुष्य कहा ाने लगा था। वित्तीय पूँ ी अबाध स्वतंत्रता और ताकत शायद इसलिए हासिल कर सकी कि सैकड़ों वर्षों के संघर्ष के बाद आम न को ो लोकतंत्र हासिल हुआ, उसका बड़े पैमाने पर आर्थिक दुरुपयोग भी हुआ। सार्व निक उद्यम नि ी कंपनियों के विकल्प न बन सके। आम तौर पर सार्व निक उद्योगों, शिक्षण संस्थानों, अस्पतालों और सरकारी कार्यालयों में लंबे समय से निकम्मेपन और लूट के दृश्य छाये रहे हैं। श्रम ीवी वर्ग, अर्थवाद में यादा गहरे में फँस गया है। इसके बरक्स नि ी कंपनियों में अधिक अनुशासनबद्ध ंग से उत्पादन स्तर में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी और बड़े पैमाने पर सरकारी कंपनियों का विलय नि ी कंपनियों में होता गया।

"आ भूमंडलीकरण व्यक्तिवाद, उदारवाद, नि ी स्वतंत्रता, मुक्त व्यापार, निर्बाध लेन-देन, आवागमन अनेक प्रकार की नागरिक स्वतंत्रताओं, लोकतंत्र आदि को अपनी सैद्धांतिक भावभूमि ाल, कव और हथियार बनाकर सो -वि ारणा

मूल्यों और ीवन-दृष्टि पर हावी हो गया है।"[3] भूमंडलीकरण के संदर्भ में प्रभा खेतान का कहना है कि-"बीसवीं शताब्दी का इतिहास यदि लिखा ाए तो सभी प्रमुख घटनाओं में सर्वोपरि है-भूमंडलीकरण की घटना। आने वाली पी ़ी इतिहास की किसी और घटना को याद रखे या न रखे, मगर यह तो याद रखेगी कि कैसे बा ार आधारित भूमंडलीकरण व्यवस्था प्रकट हुई, कैसे इसकी ओर करोड़ों लोग खिं ाते ाले गये और कैसे कुछ लोगों की आय में बे-इन्तहा इ ाफा हुआ। विलगेट्स से लेकर अ ी ा प्रेम ी तक बा ार की बड़ी-बड़ी हस्तियाँ भूमंडलीकरण के ही परिणाम हैं। भूमंडलीकरण ने बड़े नाटकीय तरीके से विश्व भर की आय में इ ाफा किया है। मगर उतने ही नाटकीय तरीके से अमीर-गरीब का आपसी भेद भी ब ़ा है।"[4] कहने का अभिप्राय यह है कि आ ा वैश्वीकरण का असली लाभ पूँ ीवादी देशों को ही है। खास तौर से अमेरिका को। भूमंडलीकरण वास्तव में अमेरिकी शक्ति और प्रभुत्व के दूसरे नाम के रूप में आ ा ाना ाने लगा है।

"भूमंडलीकरण के बारे में अधिकतर वि ारों में एक बात यह सामने आती है कि भूमंडलीकरण या वैश्वीकरण एक खतरनाक स्थिति है। भूमंडलीकरण शब्द की व्यापकता और वर्तमान समय की महत्वपूर्ण समस्याओं से इसका ुड़ाव भूमंडलीकरण को काफी विवादास्पद बना ुका है। हाँ एक तरफ इसे सारी दुनिया की विकल्पहीन नियति के रूप में प्र ारित किया ाता है, वहीं विश्व व्यापी कुविकास के पर्याय और ानक के रूप में इसके विरोध में भी सशक्त आवाज़ें दुनिया के कोने-कोने में उठ रही हैं।"[5]

भूमंडलीकरण शब्द अंग्रेज़ी के ग्लोबलाइ ेशन का हिंदी अनुवाद है। यहाँ यह वर्तमान समय का बहु र्ि ति शब्द है, लेकिन इसका सर्वप्रथम प्रयोग तब हुआ, ाब अमेरिकी पत्रिका 'इकोनांमिस्ट' के अप्रैल 1959 के अंक में इटली द्वारा आयातित कारों के 'ग्लोबलाइ ेशन कोटा' का उल्लेख किया गया है। बाद में इसकी व्याख्या करते हुए कहा गया है कि ऐसा कोई भी कार्य अथवा घटनाएँ ि ासका प्रभाव सारे संसार पर पड़ता है भूमंडलीकरण है। यह उत्तर आधुनिकता की तरह एक फिसलनदार अवस्था है ि ासमें प्रत्येक ीज़ हर समय परिवर्तनशील है इसलिए

इसकी कोई सर्वमान्य एवं मानक परिभाषा नहीं ग.ी ा सकती फिर भी वि ारकों ने भूमंडलीय अवस्था के विभिन्न पक्षों पर अपने वि ार व्यक्त अवश्य किए हैं, उन्हीं वि ारों के आलोक में हम भूमंडलीकरण को परिभाषित एवं व्याख्यायित करने का प्रयास करेंगे-

1) **कुमकुम संगारी**-"पूँ ीवाद की तो प्रकृति ही भूमंडलीय है। वह तो फैलता ही है। फर्क सिर्फ यह है कि पहले हम उसे साम्रा यवाद कहते थे, उपनिवेशवाद कहते थे, क्योंकि एक देश का पूँ ीवाद फैलकर दूसरे देशों में ाता था और उन्हें अपना उपनिवेश बनाता था, आ हम उसे भूमंडलीकरण कहते हैं, क्योंकि आ का पूं ीवाद दूसरे देशों में ाकर उन्हें अपना उपनिवेश नहीं बनाता, बल्कि नयी टेक्नोलॉ ी के रिये (मसलन कम्प्यूटर और इंटरनेट के रिये, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के रिये) सारी दुनिया में फैलता है।"[6]

2) **कमलनयन काबरा**- "आ िसे भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण, गतीकरण, नवसाम्रा यवाद, विश्वव्यापी पूँ ीवाद, विश्वव्यापी बा ारीकरण, नवउदारवाद का विश्व व्यापी विस्फोट आदि नामों से ाना ाता है, िसे न केवल आ का यथार्थ माना ाता है बल्कि उसे आ के विश्व की विकल्पहीन, अपरा ेय और अपरिवर्तनीय नियति बताया ा रहा है, उसे वास्तव में विश्व व्यापी कुविकास अथवा मानवता की महती उपलब्धियों के दुरुपयोग की दर्दनाक दास्तां के रूप में देखा ाना ाहिए।"[7]

3) **थामस फ्राइडमैन**- "वैश्वीकरण को बा ार, अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी के एकीकरण के रूप में देखते हैं। वैश्वीकरण वास्तव में बाज़ारों, अर्थव्यवस्थाओं और प्रौद्योगिकियों का एकीकरण है। इसमें विश्व के माध्यम से छोटे रूप में ऐसा संकु न हो रहा है िससे हम सभी दुनियाँ के हर कोने में इतनी ल्दी और सस्ते में पहुँ ाएँ ितने में पहले कभी संभव नहीं हुआ था। पूर्व की सभी अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्थाओं की भाँति यह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में घरेलू रा नीतियों, आर्थिक नीतियों तथा सभी देशों के विदेशी संबंधों को स्वरूप प्रदान कर रहा है।"[8]

4) गोपालदास गुरु- भूमंडलीकरण को वि ार और व्यवहार से ोड़कर देखने की हिमायत करते हैं। "भूमंडलीकरण एक ऐसे वि ार और व्यवहार का नाम है ो अपनी सार्वभौमिकता के रिये व्यक्तियों और समुदायों को उनकी पारिवेशिकता का अतिक्रमण करने का आश्वासन देता है।"[9]

5) एंथोनी गिडेंस ने अपनी पुस्तक 'द कांसीक्वेंस ऑफ माडर्निटी' में इसे परिभाषित करते हुए लिखा है-"भूमंडलीकरण का अर्थ विश्व भर के सामा िक संबंधों को इतना प्र ंड बना देना है कि दूर-दरा ा के क्षेत्रों में ो भी स्थानीय स्तर पर घटे, उसे हज़ारों मील दूर घटने वाली घटनाएँ तय करें।"[10]

6) अभय कुमार दुबे-"विकास का ो रास्ता ुना गया था, वह पूँ ी की सघनता वाला था। लगभग हर विकासशील देश के पास निवेश के लिए पूँ ी की ाह ब़ती ा रही थी। गैर-पूँ ीवादी भूमंडलीकरण की विफलता और निवेश अंतराल की समस्या का फायदा उठाकर पूँ ीवाद भूमंडलीकरण ने विश्व व्यापार के दायरे में लगभग सारी दुनिया को घसीट लिया।"[11]

7) आलोक श्रीवास्तव-"भूमंडलीकरण यानी अंग्रेज़ी में ग्लोबलाइ ेशन एक ऐसा शब्द है- िसे उसके तमाम पर्यायवा ियों सहित पिछले डे़ दशक से युद्ध स्तर पर गौरवान्वित किया ा रहा है। बहुत सरलीकृत तरीके से यह शब्द प्रगति, विकास, आधुनिकता और बनती हुई नई दुनियाँ से ोड़ दिया गया है।"[12]

8) डॉ.एम.के.पंधे-" ो आ ग्लोबलाइ ेशन हो रहा है, वह वित्तीय वैश्वीकरण है यानी किसी भी देश की ीज़ें किसी भी देश में ा सकती हैं। ... किसी भी देश की ीज़ें किसी भी अन्य देश में ा सकती हैं। मुक्त व्यापार के नाम पर यह किया ा रहा है। लेकिन किसी भी देश का म दूर किसी भी देश में नहीं ा सकता।"[13]

वास्तव में भूमंडलीकरण का उद्देश्य विश्वग्राम की अवधारणा का विकास करना है। डॉ.सुधीश प ौरी इस विश्व ग्राम की अवधारणा का नक मैक्लूहान को मानते हैं, क्योंकि उसने ही सं ार-क्रांति के व्यापक और दूरगामी प्रभाव को देखते

हुए कहा था कि सैटेलाइट सारे संसार को एक गाँव में बदल देगा ऊपरी तौर पर यह अवधारणा हमें अपनी ओर आकर्षित करती है। परंतु पीछे छुपे उद्देश्य बहुत खतरनाक एवं घातक हैं। तकनीकी के माध्यम से पूरी धरती को एक करने की यो ाना बहुराष्ट्रीय कंपनियों की है ो व्यापार के द्वारा अधिक से अधिक लाभ कमाना ाहती है। इनके लिए यह दुनिया एक बा ार भर है, हाँ इन्हें अपना माल ऊँ े दामों में बे ाना है। इस संबंध में स ्िदानंद सिंहा की टिप्पणी उल्लेखनीय है-"इस शब्द (भूमंडलीकरण) से यह भ्रम पैदा होता है कि यह ऐसी व्यवस्था है िसमें अपने छोटे स्वार्थों से ऊपर उठ लोग सारे संसार के मंगल के लिए ुड़ ायेंगे। लेकिन भूमंडलीकरण के निहितार्थ इसके ठीक उलटा है। इससे निकलने वाली 'सब ान हिताय, सब ान सुखाय' की ध्वनि के विपरीत यह व्यवस्था सारे संसार को कुछ सशक्त पूँ ीवादी प्रतिष्ठानों यानी बहुराष्ट्रीय कंपनियों और उनके सकेंद्रण के साथ सबल केंद्र अमेरिका के हितों की रक्षा का माध्यम बनी हुई है। संसार को एक करने की इसकी दृष्टि पूरी तरह एक आयामी है।"[14]

इस प्रकार हम देखते हैं कि भूमंडलीकरण एक बेहद ताकतवर घटना है ो सब कुछ बदल दे रही है। वह दोनों तरफ से बदलती है, यानी वह हालात को अपने यूनीवर्सल साँ े में तो ालती ही है, उसके प्रति उसके विरोधियों की प्रतिक्रिया भी एक खास तरह के परिवर्तन को न्म देती है ो प्रारंभ में भूमंडलीकरण के खिलाफ लगता है पर अंतिम विश्लेषण में उसकी संर नाओं की मदद करता पाया ाता है। संभवतः ऐसा इस कारण है कि भूमंडलीकरण पूँ ीवादी व्यवस्था की देन है। प्रारंभ से ही पूँ ीवाद विश्व पर एक छत्र आधिपत्य ाहता रहा है। 19 वीं शती के इस वि ार को यद्यपि विस्तार करने में समय लगा परंतु बीसवीं शती में इसी की नींव पर भूमंडलीकरण की एक विशाल इमारत खड़ी की गई िसके मक से 21 वीं सदी की आँखें ुधियाँ रही हैं। और उ ित मार्ग तलाशने में अपने को असहाय पा रही है।

भूमंडलीकरण सारी दुनिया में कुकुरमुत्ता की तरह ते ी से उगने वाली बहुउद्देशीय कंपनियों के कारोबार का बहुराष्ट्रीकृत संस्करण है और यह मुख्यतः कुछ एक धनी देशों में सिमटा हुआ है। यह भी स है कि इस विश्व बा ार में

लाखों-करोड़ों छोटे आर्थिक घटकों की अत्यन्त सीमित और पराश्रित भूमिका होती है। इस संसार-व्यापी आर्थिक मं ा पर विश्व कारोबार के एक बड़े हिस्से पर कुछ बड़ी बहुउद्देशीय अथवा पर-राष्ट्रीय कंपनियों का ही नियंत्रण होता है। भूमंडलीकरण के मुख्यतः तीन घटक-(उदारीकरण, नि ीकरण और बा ारवाद) है। इस तरह 1970 के पूर्वार्द्ध में प्रारंभ की गयी नीतियों ने सन् 1990 के दशक में तीसरी दुनिया के अधिसंख्य देशों के ऊपर न केवल अपने पैर ामाए बल्कि पूँ ीवादी सिकं ा भी कस लिया। भूमंडलीकरण के व्यापक स्वरूप पर वि ार व्यक्त करते हुए कमल नयन काबरा ने लिखा है "भूमंडलीकरण का दूसरा नाम हो सकता है विश्व कारोबार का बहुउद्देशीय कंपनियों द्वारा निर्धारण और नियंत्रण। इसमें एक बात बड़ी अ ीब है। उत्पादन के सब साधनों को विश्व आर्थिक पटल पर आने- ाने और कारोबार करने की ऐसी आज़ादी मिल गयी है मानो राष्ट्रीय सीमाएँ, कानून कायदे तथा नियम अर्थहीन हो गये हों, एक अर्थशास्त्री ने अभी एक किताब लिखी है ि ासका शीर्षक है ‘इमेि ान देयर इ ा नो कन्ट्री’ अर्थात् कल्पना कीि ाए कि अब दुनियाँ राष्ट्र-विहीन हो गयी है। एक सीमित अर्थ में राष्ट्रों की और आर्थिक राष्ट्रवाद या देशों की आर्थिक प्रभुसम्पन्नता के घटने का एक उदाहरण है अथवा यह भी कहा ा सकता है कि अधिकांश देशों में राष्ट्रहित और कंपनी हित को एक माना ाने लगा।"[15]

पिछले कुछ वर्षों में भूमंडलीकरण के व्यापक प्रभाव का ो परिणाम सामने आया उससे सू ाना तकनीकी एवं प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिला तथा कंप्यूटर एवं इंटरनेट के द्वारा दुनिया भर का सू ाना तंत्र आपस में ुड़ गया है। ि ासे अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, वित्तीय लेन-देन न केवल विश्व स्तरीय बना बल्कि सस्ता भी कर दिया है। विश्व के वित्तीय बाज़ारों, अर्थात् पूँ ी मुद्रा तथा विदेशी करेंसी बा ार में हर दिन अरबों-खरबों डॉलर का लेन-देन इसी सं ार माध्यमों द्वारा किया ा रहा है। ध्यातव्य है कि ये तकनीकी परिवर्तन भूमंडलीकरण के विकास में पुर- ोर सहायता करते हैं, परंतु आर्थिक नीतिगत क्षेत्र में खुलेपन,

बाज़ारीकरण तथा नियंत्रण मुक्ति के साथ ही इनका उपयोग हो यह आवश्यक नहीं है।

भूमंडलीकरण अपने विकास के खेल में ऐसी परिस्थितियाँ तैयार करता है ि ासिसे लाखों-करोड़ों लोग खुद को हाशिए पर पाकर अवांछित और त्या य महसूस करने लगते हैं। इस संबंध में कोठारी टायनवी का यह कथन उल्लेखित करना अपेक्षित ाान पड़ता है-"भूमंडलीकरण एक बहुस्तरीय प्रक्रिया न होकर एक प्रभुत्वशाली केंद्र का घटक बन ाान‍े का नाम है।"[16] इस प्रकार वैश्वीकरण एक तरह से दादागिरी ही है धनी देशों की। धनी देश कई तरह के रा ानीतिक और आर्थिक हस्तक्षेप करके अपने अधीन उपनिवेशों की तरक्की के रास्ते बंद करते हैं ताकि बंद रास्तों वाले उनके कदमों में आकर गिड़गिड़ाए, उनसे मदद के लिए भीख मांगे। धनीदेश अपनी तरक्की की लागत काफी अन्यायपूर्ण और शोषक तरीकों से कम ताकतवर और कम गुलाम देशों पर थोपते हैं। इसके लिए वे अपनी सैन्य शक्तियों एवं छद्म शक्तियों का खुलकर प्रयोग करते हैं। इससे वे अपने से कम ाोर आश्रित देशों को परंपरागत संस्थाओं और प्रक्रियाओं को नष्ट करने के सारे प्रयास करते हैं ताकि वे देश निर्बलीकरण से उबर न पाएँ और धनी देश आराम से अपना काम कर सकें। भूमंडलीकरण का सारा प्रयास एवं विकास उत्तर आधुनिकता के प्रयास एवं विकास से काफी दूर तक सा ाा करता प्रतीत होता है। संभवतः इसीलिए प्रभाकर श्रोत्रीय उत्तर आधुनिकता को ही भूमंडलीकरण की बौद्धिक प्रक्रिया मानते हुए लिखते हैं-"उत्तर आधुनिकता को भूमंडलीकरण का बौद्धिक पक्ष क्यों न कहा ााए? क्योंकि दोनों में ाो उद्‌भुत समानता है वह अप्रत्याशित संयोग नहीं हो सकता। एक को अंतर्राष्ट्रीय वि ाार और दूसरे को अंतर्राष्ट्रीय बा ाार कहा ाा सकता है, ाबकि एक अमेरिका ांद यूरोपीय देशों का वि ाार और दूसरा बा ाार है। दोनों मनुष्यता के 'भविष्य' होने का दावा करते हैं, ाबकि ये इन्हीं देशों का वर्तमान एवं भविष्य है। भीमकाय प्र ाार-तंत्र, सैटेलाइट, कंप्यूटर, इंटरनेट सब इनका दबाव बनाने में व्यस्त है, ताकि उत्पादन की गुणवत्ता को प्र ाार की 'बहुलता' से विस्थाापित कर सकें और

ग्राहक बुद्धि के सम्मोहन में ऐसा कसे कि ाँ ा-परख, ायन, आवश्यकता, परिवेश, प्राथमिकता, क्रय-विक्रय सबको भूलकर वह इनका गुलाम हो ाए।"[17]

पूँ ीवादी अर्थव्यवस्था के पास इस गुलामी में ाकड़ने के लिए अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष (अ.मु.को.), विश्व व्यापार संगठन (डब्लू.टी.ओ) तथा विश्व बैंक नामक तीन संस्थाएँ हैं, ो अमेरिका के प्रयास से गठित हुई हैं, और उसी के उद्देश्यों एवं हितों की पूर्ति में लगी रहती है। अमेरिका को इन संस्थाओं के गठन की रूरत उस समय पड़ी थी ाब द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटेन, ार्मनी, ापान और फ्रांस आदि देशों की अर्थ व्यवस्थाएँ पूरी तरह धराशायी हो गयी थी और अमेरिका इस प्रभाव से अछूता रहा। लेकिन वह अपनी अर्थव्यवस्था को आगे तक तभी कायम रख सकता था। ाब व्यापार के लिए दूसरे देशों के पास भी ऐसी ही अर्थ-व्यवस्थाएँ हों। अतः उसे अपने व्यापार के लिए दूसरे देशों की अर्थ-व्यवस्थाओं को कायम करना था। ो उन्हें आर्थिक सहयोग देकर ही संभव था। इसी आर्थिक सहयोग के इरादे से अमेरिकी प्रयत्न से 1944 ई. में ब्रिटेन वूड्स में आयो ात अर्थशास्त्रियों का गठन किया गया और उनका कार्यालय वाशिंगटन डी.सी. रखा गया। इसी सम्मेलन में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन की भी रूपरेखा तैयार की गई ो पहले गैट और फिर बाद में विश्व व्यापार संगठन के नाम से गठित हुआ।

इस तरह ये तीनों संस्थाएँ ूँकि अमेरिका की छत्रछाया में गठिन हुई, इसलिए इन पर अमेरिका का व स्वि बना रहा। रूस और ीन ो समा ावादी अर्थव्यवस्था के पोषक देश थे इन संस्थाओं से अलग रहे। ये संस्थाएँ एन-केन-प्रकारेण पूँ ीवादी व्यवस्था की संरक्षिका ही थीं। परंतु कालांतर में ालकर बाह्य दबावों और आंतरिक अंतर्विरोधों के कारण इन देशों की अर्थ-व्यवस्था टूटने लगी तो पूँ ीवादी अर्थ-व्यवस्था का विरोध करनेवाला कोई देश नहीं ब ा और द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद महाशक्ति के रूप में उभरा अमेरिका के नेतृत्व में पूँ ीवाद का एक छत्र साम्रा य कायम हो गया। औप ारिक तौर पर वीटो का अधिकार ीन और रूस के पास अब भी थे पर वे इसका इस्तेमाल अमेरिका के सामने कर पाने में अक्षम् हो गये थे। ऐसी स्थिति में अमेरिका संयुक्त राष्ट्र संघ को भी अपने कब े में लेकर मनमानी

करने लगा। फलस्वरूप पूँ ीवाद को विकसित होने का भरपूर मौका मिला और इसके लिए ो लोकतंत्र विकसित हुआ उसे भूमंडलीकरण की संज्ञा दी गयी।

इस तरह स्पष्ट हो ाता है कि भूमंडलीकरण एक शुद्ध आर्थिक प्रक्रिया है, ो संपूर्ण मानवता के हित में न होकर अमीर देशों अथवा गरीब देशों के मुट्ठीभर अमीर लोगों के आर्थिक मुनाफे के लिए है। यही वे लोग हैं िनके लिए दुनिया एक गाँव अथवा मंडी हो गई है। आधुनिक यंत्रों, सं ार माध्यमों तथा ते हवाई वाहनों आदि के द्वारा पलक पकते ही कहीं पहुँ सकते हैं, किसी से मिल सकते, कुछ भी प्राप्त कर सकते हैं, किसी भी कोने में बात कर सकते हैं और समू े संसार को बा ार में बदलकर व्यापार कर सकते हैं। गरीब देश और वहाँ की निरीह आम नता आ भी अंधेरे में है, साधन विपन्न है, मूलभूत सुख-सुविधाओं से वं ित है। विश्व की एक बड़ी आबादी िसे न भरपेट भो न नसीब है और न तन कने को कपड़ा, वे खुले आसमान के नी े ठंडी-गर्मी दोनों मौसमों में रात और दिन गु ारने के लिए अभिशप्त है। इनके लिए शिक्षा और िकित्सा भी लल ायी भरी नज़रों से दूर से देखने वाली ीज़ें हैं।

वास्तव में भूमंडलीकरण उत्तर आधुनिक दौर की उत्तर पूँ ीवादी व्यवस्था है िसमें अमीरी-गरीबी की खाई पटने के ब ाय ब ़ी है, अमीर और अमीर होता ा रहा है तथा गरीब और गरीब होता ा रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार भूमंडलीकरण का 50% संसाधन दुनिया के 2% लोगों के कब े में है। लोकतंत्र का सबसे बड़ा सपना समानता टूटा है। असमानता की खाई और ौड़ी होती गयी है। अमेरिका हो या भारत ो वहाँ के मूल निवासी (आदिवासी) थे वे विस्थापन का ीवन ीने के लिए विवश हैं, उन्हें अपने ही प्राकृतिक घरों (ंगलों) से बड़ी तेज़ी से बेदखल किया ा रहा है। ंगलों को काटकर ऊँ ी-ऊँ ी अट्टालिकाओं का निर्माण करनेवाले श्रम ीवी लोग स्वयं उसका सुख-भोग नहीं कर पाते हैं। बाज़ार अत्यधिक पूँ ी की कमाई का लाल देकर ग्रामीण किसानों को मीन गिरवी रखकर टैक्टर खरीदने का न केवल प्रलोभन देते हैं अपितु विवश भी करते हैं।

आकड़े बताते हैं कि आत्महत्या करनेवाले लोगों में कृषक वर्ग की संख्या सबसे यादा है। वे क्रवृद्धि ब्या । पर आधारित लोन को ुकाने में असमर्थ हैं और तो और विदेशी खादों के प्रयोग से मिट्टी की उर्वर शक्ति धीरे-धीरे नष्ट होती ा रही है ि ससे उत्पादन की मात्रा में निरंतर गिरावट द ि की गयी है। भारत में लगभग 60 करोड़ लोग गरीबी रेखा के नी े ीवन ी रहे हैं तथा 78% नता गाँवों में रह रही है, हाँ विकास के नाम पर यो नाएँ तो लायी ाती हैं पर कार्य न के बराबर होता है। सारा धन बि ौलिए तक ही सीमित हो ाता है। यह सब भूमंडलीकरण का ही दुष्परिणाम है। उसी ने बा ार, विज्ञापन, सं ार माध्यमों एवं मीडिया द्वारा ऐसी उपभोक्तावादी संस्कृति विकसित की है, ि सका एकमात्र उद्देश्य अधिक से अधिक भौतिक वस्तुओं का भोग करना है। इस संस्कृति के ाल में फँसकर तीसरी दुनियाँ के गरीब लोग भी वस्तु उपभोग और वस्तु संग्रह की होड़ में लग ाते हैं और खून पसीने की गा ़ी कमाई का अधिकांश हिस्सा बा ार के माध्यम से बहुराष्ट्रीय कंपनियों की विदेशी ति ोरी में डालकर स्वयं कंगाल हो ाते हैं। भूमंडलीकरण का विस्तार केवल व्यापार एवं बा ार तक ही सीमित नहीं है इस संबंध में समीर अमीन की यह टिप्पणी दर्शनीय है "भूमंडलीकरण की प्रगति का दायरा व्यापार तक ही सीमित नहीं रह रहा है (विकसित पूँ ीवादी देशों के औद्योगिक और कृषि उत्पादों के अ छे-अ छे हिस्से (लगभग एक तिहाई) की खरीद-बिक्री अब विश्व बा ार में होती है) इससे उत्पादन व्यवस्था (आत्मकेंद्रित राष्ट्रीय व्यवस्था उत्तरोत्तर भंग हो रही है और एकीकृत विश्व-उत्पादन व्यवस्था के अंग के रूप में पुनर्गठित हो रही है), प्रौद्योगिकी (विशिष्ट राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी विश्वव्यापी प्रौद्योगिकी के लिए राह खोलती है), वित्तीय बा ार और समा िक के बहुतेरे अन्य पहलू भी प्रभावित होते हैं। समकालीन घटना यह है कि तीसरी दुनिया के देशों में उद्योगीकरण शुरू हुआ और वे भी इस भूमंडलीकरण में समेट लिए गए हैं (इस बदलाव का श्रेय मैं दूसरे विश्व युद्ध के बाद राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन को और पूर्वी यूरोप के देशों द्वारा वांडुग परियो ना के समर्थन को देता हूँ। पूँ ीवाद विकास के तर्कशास्त्र को इसका श्रेय बिल्कुल नहीं देता ि सने अंतर्राष्ट्रीय श्रम

विभा ान की शर्तों को बदल डाला है और केंद्र/परिधि (सेंटर/पेरी फैरी) ध्रुवीकरण के परंपरागत रूप का क्षरण कर डाला है।"[18]

इस प्रकार हम देखते हैं कि पूँ ीवाद का विस्तार ि ान दो क्षेत्रों के संयोग के आधार पर खड़ा होता है वह सामाि ाक और रा ानीतिक प्रबंध का क्षेत्र है। केंद्र में अवस्थित राष्ट्रीय रा यों के द्वारा ही अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की संर ाना की रूपरेखा तय की गयी। फलस्वरूप हम एक नये युग में प्रवेश कर गये ि ासकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पूँ ीवाद के आर्थिक प्रबंध के भूमंडलीकृत क्षेत्र और सामाि ाक-रा ानीतिक प्रबंध के राष्ट्रीय क्षेत्र में अलगाव पैदा हो गया है। कुल मिलाकर उत्तर पूँ ीवादी इस युग में बा ार के साथ-साथ नि ी कंपनियाँ नि ी बैंक औद्योगीकीय विकास, सू ाना माध्यम (इंटरनेट, कंप्यूटर, टेलीवि ान) फिल्म ागत, सैटेलाइट, व्यावसायीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति आदि-आदि मिलकर भूमंडलीकरण का ो स्वरूप निर्धारित करते हैं। वह ऊपर से ि ातना आकर्षक एवं सुहाना तथा सुखदायी लगता है किंतु उसके परिणाम उतने ही भयानक तथा नवीन समस्याओं को ान्म देनेवाले हैं।

भूमंडलीकरण विषय पर बात करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि आर्थिक व र्स्व, सांस्कृतिक व र्स्व और माध्यम व र्स्व तीनों भूमंडलीय व र्स्व के फिनोमिना है। ि ानका गहरा संबंध बहुराष्ट्रीय निगमों के आर्थिक साम्रा य से है। शिलर महोदय ने माध्यमों के अर्थशास्त्र, रा ानीति और सामाि ाक आधार की विस्तृत व्याख्या अपनी पुस्तक में पेश की है। साथ ही सू ाना, सं ाार और संस्कृति के अंतर्संबंधों में सक्रिय अंतःक्रिया का उद्घाटन किया। उनका मानना है कि 'विश्व व्यवस्था' भूमंडलीय आर्थिक बाज़ार व्यवस्था से बनी है। ि ासमें पश्ि ाम के औद्योगिक राष्ट्रों की भागीदारी मुख्य है। इनकी स्वे छा ारिता के अनुरूप ही मानवीय एवं प्राकृतिक संसाधनों के स्वामित्व का फैसला होता है। और तीसरी दुनिया के देश ि ान्हें गरीब राष्ट्र की संज्ञा दी ाती है, वे इस संदर्भ में हाशिए पर होते हैं। इसका एक बहुत बड़ा कारण यह भी है कि इनके (तीसरी दुनिया) और औद्योगिक राष्ट्रों (विकसित राष्ट्रों) केंद्रीय आर्थिक, तकनीकी और रणनीति एवं

रा ानीतिक शक्ति के लिहा ा से काफी दूर होती है। प्रकारांतर से औद्योगिक राष्ट्र केंद्र में होते हैं और तीसरी दुनियाँ के राष्ट्र हाशिए पर। इसे ही शिलर ने केंद्र और हाशिए के रूप में विश्लेषित किया है। कैनेडियन अर्थशास्त्री यूनोसोव्स्की बताते हैं कि-"विश्व बैंक एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष विश्व अर्थतंत्र, विश्वग्राम और आर्थिक खुलातंत्र के नाम पर गरीबी का भूमंडलीकरण करते हैं। वे अंतर्राष्ट्रीय पूँ ी के नये केंद्र हैं। उनसे कर्ज़ लेने वाले देशों से उनका रिश्ता बहुत कुछ परंपरागत सूदखोर महा ानों एवं गरीब किसानों ैसा होता है। दरअसल भूमंडलीकरण बड़े इ ारेदार देशों की संयुक्त पूं ी, विशेषकर अमेरिकी पूँ ी का भूमंडलीकरण है।"[19]

सांस्कृतिक व र्स्व बनाये रखने के लिए पहली एवं अनिवार्य शर्त माध्यम (मीडिया) व र्स्व है। सांस्कृतिक व र्स्व का आधुनिक संस्करण ही 'सांस्कृतिक साम्रा यवाद' कहलाता है। ि ासका अर्थ है एक देश की संस्कृति, भाषा और वि ार को अन्य दूसरे देशों के ऊपर थोपना या प्रसारित करना। इस अवधारणा का प्रारंभ ईसाइयत (1549) के अंग्रेज़ी प्रकाशन से होता है। इसने अन्य भाषाओं को दबाकर अंग्रेज़ी को स्थापित करने का प्रयास किया। 18 वीं और 19 वीं शती में वेल्स, स्कोटिश और आइरिश भाषाओं का दमन अभियान ाला। 18 वीं से 20 वीं शदी तक स्वीडिश सरकार ने सभी ातियों के संस्कृति का दमन निरंतर किया न केवल उनकी भाषा पर पाबंदी लगी बल्कि कला रूपों और मैि ाकड्रम आदि को भी बड़ी तेज़ी से हटाया गया। कहना गलत न होगा कि ताकतवर देश अपने पड़ोसी कम ाोर देशों पर हावी होने के लिए मीडिया द्वारा पहले अपनी संस्कृति थोपते हैं। वर्तमान समय में अमेरिका इसका वलंत उदाहरण है। कुछ वि ारकों का यह भी कहना है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सांस्कृतिक मालों के निर्यात और पापुलर कल ार के कारण विभिन्न देशों के विशिष्ट सांस्कृतिक रूपों के लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया है। एक बात तो यह साफ है कि संस्कृति और संस्कृति निर्माण के प्रतिमानों पर कभी कम ाोर लोगों का व र्स्व रहा ही नहीं। संस्कृति निर्माण का सारा खेल बड़े एवं ताकतवर लोगों का है। संभवतः यही कारण है कि स्थानीय स्तर पर ि ान वर्गों का संस्कृति के क्षेत्र में व र्स्व रहा है वे ही कालांतर में सांस्कृतिक साम्रा यवाद के

स्थानीय ए ोंट के रूप में उभरकर सामने आए हैं। ो व्यक्ति इस थोपी गयी सांस्कृतिक मूल्यों को स्वीकार नहीं करता उन्हें उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है, बहुत संभव है हाशिए पर भी डाल दिया ाता है।

आ ा सभ्य होने और आधुनिक होने का पैमाना यही विदेशी संस्कृतियाँ हैं, नंगे टहलना उ ा ीवन मूल्यों का परि ायक है। इस नंगी संस्कृति को ो लोग ि तना प ा सके हैं वे उतने ही आधुनिक और सभ्य हैं पहनावे से लेकर गीत संगीत एवं खान-पान तक मीडिया द्वारा लादी गयी संस्कृति का हस्तक्षेप ब . ता गया है। भ्रम होता है कि हम ामाने को बदल रहे हैं पर कटु स ा यह है कि ामाना हमें बदल रहा है। इस सबके केंद्र में मौ ूद है बा ारवाद। बा ारवाद वर्तमान में हमारे ऊपर इतना हावी है कि हम उसकी पसंद की ीज़ों को इस्तेमाल करने के लिए विवश है। यह एक विकल्प विहीन व्यवस्था है। वास्तविकता तो यह है कि बाज़ारवाद ने मनुष्य को मानसिक दृष्टि से नपुंसक बना दिया है। अतः किसी वस्तु के ायन के विषय में हम बाज़ार की दृष्टि से ही सो ाते हैं।

1994 ई. में दिये गये अपने एक साक्षात्कार में शिलर महोदय ने ग्लोबल विले ा के स्थान पर ग्लोबल मेल की अवधारणा पेश करते हुए कहा कि "इसे नियंत्रित करने का काम बड़े-बड़े कारपोरेशन कर रहे हैं, इनकी राष्ट्र-रा य के प्रति कोई ि म्मेदारी नहीं है। मु े देश-विदेश में ैनलों के विस्तार को लेकर कोई आपत्ति नहीं है। किंतु ैनलों का ानता की ारूरतों की पूर्ति के लिए इस्तेमाल होना ाहिए। इनमें वैविध्यपूर्ण शिक्षा, स्वास्थ और सामान्य सांस्कृतिक ारूरतों के साथ-साथ विविध किस्म की पुनर्सृ ानात्मक ारूरतें भी शामिल हों।"[20] पर व्यापक स्तर पर आप ाँ ा-पड़ताल करेंगे तो पायेंगे कि ये सब ालसा ी है, ूठ है, फरेब है क्योंकि ैनल इन ारूरतों की तरफ ध्यान देने के ब ाय अपने मुनाफे की वृद्धि एवं विस्तार में लगे हुए हैं। इंटरनेट का व्यावसायिक विस्तार निरंतर ान सामान्य की ागह छीन रहा है। इस संबंध में शिलर महोदय का कहना है कि "हमारे सार्व ानिक पुस्तकालय अमरीकी इतिहास में सबसे बड़े-बड़े लोकतांत्रिक संस्थान

रहे हैं, यदि आप लोगों की ीवनी प ें तो पायेंगे कि महान व्यक्तियों के निर्माण में पुस्तकालयों की बड़ी भूमिका रही है।"[21]

ध्यान देने वाली बात यह है कि सार्व ानिक पुस्तकालयों को कोई शुल्क देय नहीं होता और इन पुस्तकालयों में संग्रहित सू ानाएँ सभी के लिए होती हैं ाो किसी भी व्यक्ति को आसानी से प्राप्त हो सकती है। पर आ ा पुस्तकों की तरह ही सू ानाएँ भी बिकती हैं या यूँ कहें कि आ ा सू ानाएँ माल एवं वस्तु के रूप में तब्दील हो गयी हैं। 1968 ई. में ाो सू ाना उद्योग विकसित हुआ उसका कान्सेप्ट ही यह है कि पहले सू ानाएँ मुफ्त में मिलती थी अब पैसे में मिलेगी।

शिलर महोदय 'डेफीनेशनल कंट्रोल' की अवधारणा के तहत अमरीका के मीडिया व र्स्व और सांस्कृतिक व र्स्व को विश्लेषित करते हुए लिखा है "डेफीनेशनल कंट्रोल का अर्थ है अभिव्यक्ति और संप्रसारण पर नियंत्रण, स्थानीय और भूमंडलीय यथार्थ का नियंत्रण। सू ाना का ऐसा ाँ ाा ाो अर्थ और अज्ञानता पैदा करता हो, भरोसेमंद राष्ट्रीय इंस्ट्रमेण्टल सिस्टम पर निर्भरता पैदा करता हो, इसमें स्कूल, मनोरं ान, मीडिया, रा ानीति आदि सभी शामिल हैं यह हमेशा प्रतिबिंबित करता है, इसकी ारूरत है कि ऊपर से निर्देश देने की ारूरत न पड़े, सामा िक पिरामिड में आदेश या निर्देश ऊपर से न आए। बल्कि बगैर बताए, बगैर किसी प्रयास के ाुप ााप आते रहे, इससे हमारे संदर्भ और दृष्टिकोण का निर्माण होता है ... अभी 'संदर्भ का फ्रेम' सामा िक और अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं को नियंत्रित कर रहा है।"[22] ध्यातव्य है 'सन्दर्भ का फ्रेम' और कोई नहीं बल्कि अमेरिका है। ि ासका दीर्घकालिक केंद्रीय उद्देश्य विदेशों में लगी अमेरिकी पूँ ाी का विस्तार करना और रक्षा करना है। इसके लिए हज़ारों बार सैन्य और आर्थिक हस्तक्षेप किये ााते रहे हैं ाो नेता अमरीकी हितों का विरोध करते उन्हें अपदस्थ होना पड़ा। समू ाी अमरीकी अर्थव्यवस्था कारपोरेशन ागत पर निर्भर है। वे ही इस अर्थव्यवस्था के मुख्य खिलाड़ी हैं। अतः बड़ी व्यावसायिक कंपनियों के हितों को ाहाँ भी खतरा पैदा होता है वहाँ अमरीकी शासन सतर्क और सक्रिय हो ााता है।

उत्तर पूँ ीवादी व्यवस्था ने 'डेफीनेशनल कंट्रोल' को और अधिक म ाबूती प्रदान किया है। इसका बा ार व्यवस्था से सीधा एवं गहरा संबंध है। यह स ोतन स कि सांस्कृतिक उद्योग का हिस्सा है। ि से हम लोग फिल्म, टी.वी., रेडियो, प्रकाशन, संगीत आदि मनोरं ाक माध्यमों के रूप में ानते हैं। यह सांस्कृतिक उद्योग अमरीकी कंपनियों को देश-विदेश में व्यापक स्तर पर फलने-फूलने का अवसर मुहैया कराता है। अमेरिकी कंपनियों के सांस्कृतिक मालों का सबसे पहले अमरीकी नता और बा ार पर असर पड़ता है, वे किसी भी स्थिति में विदेशी सांस्कृतिक माल को अमेरिका में नहीं आने देते। इसके लिए रा य वैकल्पिक उपाय की व्यवस्था भी करता है। यदि तब पर भी बात नहीं बनती तो उस पर प्रतिबंध लगा दिया ाता है। यह ानकर हर किसी को हैरानी हो सकती है कि 1996 में विदेशी भाषा की फिल्में न्यूयार्क में रिली ा की गई परंतु 2, 4 फिल्मों के नाम को छोड़ शायद ही किसी को पता हो। खास बात तो यह है कि इन फिल्मों को अमेरिका में दिखाया भी नहीं ाता। बकि यूरोपीय एवं एशियाई देशों में स्थिति ठीक इसके विपरीत है। यूरोप में अमरीकी फिल्मों की धूम म ी हुई है। इतना ही नहीं अमरीकी पाठक भी विश्व साहित्य से अभिज्ञ है। ो यह दर्शाता है कि अमेरिकी नता का घरेलू परिवेश के बाहर की दुनिया को लेकर ज्ञान अत्यन्त सीमित है। वे अपने इतिहास के बारे में भी यादा कुछ नहीं ानते। पीटशी र ो साठ वर्षों से लोक-गीत गाता रहा है ऐसे गायक के बारे में शोध छात्रों को उसका नाम तक पता नहीं। ो यह दर्शाता है यदि उस समय आप टी.वी. ैनलों पर दिखाई नहीं दे रहे हैं तो राष्ट्रीय ऑडियंस के लिए आपका कोई अस्तित्व नहीं है। यादातर व्यक्ति, घटनाएँ, सामा िक आंदोलन और र ानात्मक प्रयासों का व ूद इसलिए नहीं माना ाता क्योंकि वे टी.वी. के पर्दे पर दिखाई नहीं देते सांस्कृतिक उद्योग और मीडिया की सांठ-गांठ का पता इस बात से भी ालता है कि 'केबल ैनलों' की बा ़ में, खासकर मनोरं ान ैनलों पर विदेशी खबरें नदारद सी हो गयी हैं। "विदेशी खबरें समस्त नेटवर्क के लिए परायी हो गई हैं। खबरों में अमेरिकी खबरें, रंगीन दुनियाँ

हावी है, बाकी विश्व गायब है, आ ा हम पहले से भी यादा वि छिन्न नज़र आ रहे हैं।"[23]

आ ा टी.वी. खबरों का वस्तुकरण हो गया है। मनोरं ान मूल्य के आधार पर यादातर कंटेंट का ायन हो रहा है ि ासका सीधा संबंध मीडिया ागत से है। यह अनियंत्रित बा ार निर्धारित आपरेशन है। इनको वित्तीय समर्थन उनसे मिल रहा है ाो समय और संदेश खरीद सकते हैं। वे निर्धारित करते हैं कि विश्व की ानता कितनी संस्कृति संपन्न बने। उदाहरण के तौर पर भारतीय सिनेमा ागत की अधिसंख्य फिल्मों एवं धारावाहिकों को सामने रखा ाा सकता है ि ासका भारतीय समा ा से कोई संबंध, सरोकार नहीं बनता। पर इनके माध्यम से ानता के ऊपर विदेशी सांस्कृतिक क ारा लादा ाा रहा है। भारतीय संस्कृति का विलय कितनी तेज़ी से पाश ाात्य संस्कृति में हुआ है कहने की आवश्यकता नहीं।

अब तक के विवे ान-विश्लेषण से यह बात तो साफ है कि सांस्कृतिक साम्रा यवाद (भूमंडलीकरण का मुखौटा) की पैठ ानसं ाार माध्यमों के ारिए होती है। सांस्कृतिक साम्रा यवाद की पैठ का मुख्य क्षेत्र है शिक्षा। आ ा शिक्षा को बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हितों के अनुकूल ाला ाा रहा है इसके अतिरिक्त विकसित देश अपनी कार्यप्रणाली तीसरी दुनिया के देशों पर थोपते हैं।

बी.बी.सी., आर.टी.एफ., एन.बी.सी. और सी.बी.एस. ैसे संगठन न सिर्फ अपनी संर ाना बल्कि कार्य प्रणाली के दर्शन का भी निर्यात करते हैं। सांस्कृतिक साम्रा यवाद के दौर का एक अन्य फिनोमिनो है काल के आयाम का ह ााना। ाो घटना पहले कभी दशकों में घटित होती थी वह आ ा रातों-रात घटित होने लगी है। इस प्रक्रिया का धनी पूँ ाीवादी राष्ट्र और बहुराष्ट्रीय निगम अपने हित में इस्तेमाल कर रहे हैं।

'विश्वव्यस्था' रंगमं ा है और उसके सं ाालन की गति की दिशा केंद्र से परिधि की ओर होती है। सं ाालन की यह विधि आपसी सहमति से सुनिश्ि ात की ााती है। इसमें सभी देशों के शासक शामिल होते हैं, ाहे वे केंद्र में हों या परिधि में। ये शासक नि ाी स्वार्थ के लिए अपने-अपने देश और देश की ानता को विश्व

पूँ ीवादी अर्थव्यवस्था में पहुँ ाने के लिए अथक प्रयास करते हैं। शासक वर्ग द्वारा ुने गये पूँ ीवादी रास्ते का दुष्परिणाम यह होता है कि राष्ट्रीय ीवन और राष्ट्रीय संस्कृति अंतर्राष्ट्रीय पूँ ीवादी व्यवस्था और अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक व स्वि के पूर्णतः अधीन हो ाती है। इससे हाँ एक ओर पूँ ीवादी एकीकरण होता है वहीं दूसरी तरफ सांस्कृतिक हमला भी।

अतः यह स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होनी ाहिए कि मौ ूदा विकसित पूँ ीवाद की प्रौद्योगिकी विकासशील देशों के विकास में किसी भी प्रकार सहायक नज़र नहीं आती। साथ ही यह भी सम ना निहायत रूरी है कि यह प्रौद्योगिकी अपने आप में पूँ ीवादी ाँ े की अभिव्यक्ति है और वह उस समा की प्रसव पीड़ा की अभिव्यक्ति है हाँ उसका न्म हुआ है। कहना गलत न होगा कि प्रौद्योगिकी का न्म स्थान अमेरिका ही है। अतः उसी के हित को ध्यान में रखकर सारी यो नाएँ एवं प्रक्रियाएँ निर्धारित की ाती हैं िसका तीसरी दुनिया के देशों से कोई संबंध नहीं बनता। इस प्रकार भूमंडलीय व स्वि के दौर में अमेरिका केंद्र में स्थित वह मदारी है ो समस्त विश्व को अपनी यो नाओं के अनुसार सं ालित एवं क्रियान्वित करता है। दूसरे शब्दों में िन सेवाओं से धनी देशों को लाभ हो उन व्यापार क्षेत्रों को मुक्त किया ा रहा है और िन मुक्त व्यापार से तीसरी दुनिया के गरीब एवं श्रम प्रधान देशों को लाभ हो सकता है, उन पर बड़ी तेज़ी से प्रतिबंध लगाया ा रहा है।

भूमंडलीकरण के समर्थकों का कहना है कि भूमंडलीकरण के कारण ही दुनिया भर के बा ार आपस में मिलते हैं, उनका पारस्परिक समन्वय हो रहा है। पर यह दावा यदि सही होता तो दुनिया भर की कीमतों में एक समानता पायी ाती, बकि हकीकत ठीक इसके विपरीत है। तीसरी दुनिया से निर्यात होने वाली वस्तुओं की कीमत में लगातार गिरावट की प्रकृति देखी ा रही है बकि धनी देशों द्वारा निर्यात अर्थात् गरीब देशों द्वारा आयातित की ानेवाली वस्तुओं के दामों में बेतहाशा वृद्धि हुई है।

भूमंडलीकरण व्यक्तिवाद की नींव पर खड़ा है। एक तरफ इसका संबंध नव-उदारवादी वि ारधारा की व्यक्तिगत नि ाता की स्वायत्ता से है, तो दूसरी ओर भूमंडलीकरण का विशाल परराष्ट्रीय, भौगोलिक फलक पर अवलोकनीय कार्यक्षेत्र है ो अरबों मनुष्यों, परिवारों, समा ों तथा राष्ट्रों की गहन संबंधों पर आधारित है और उसे उत्तरोत्तर गहन और व्यापक परंतु अधिकाधिक विषमता ग्रस्त बनाने में लगे हैं।

नव उदारवादी भूमंडलीय बा ार व्यवस्था समृद्ध और शक्तिशाली को उत्तरोत्तर समृद्ध और शक्तिशाली तथा साधन संपन्न बनाता ाता है ाबकि साधन विपन्न और शक्तिहीन लोगों को और यादा साधन विपन्न और शक्तिहीन। इस नव उदारवादी भूमंडलीय सिद्धांतों के आधार पर र ित वृद्धि एवं विकास की अवधारणा भी राष्ट्रीय आय में लगातार तीव्र वृद्धि को स्वतः कालांतर में सब लोगों के कल्याण का माध्यम मानती है। परंतु सर्व ान हितकारी, समन्वयवादी पारस्परिकता को निरंतर कम ोर करके दुनिया को कम ोर राष्ट्रों, तबकों तथा हिस्सों और व्यक्तियों में बाँटने का काम भी पूरी निष्ठा से करती है। इस संबंध में कमलनयन काबरा की टिप्पणी उल्लेखनीय है। "भूमंडलीकरण ैसी पक्षपाती, न्याय विहीन व्यवस्था के उद्भव, विकास और क्रमिक प्रसार का पिछली पाँ ा शताब्दी का इतिहास और उसकी प्रकृति यह साफ दिखाते हैं कि यह सीमित तबकों (उ ा वर्ग) के हितों को सर्वोपरि मानने वाली व्यवस्था है। इसका विश्वव्यापी रूप कोई नया या आश ार्य ानक नती ा नहीं है। इमेन्युल वाले रस्टाइन ने गहन ऐतिहासिक अध्ययन के आधार पर पूँ ी को मूल रूप से और स्वभावतः एक विश्वव्यापी व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया है। इसीलिए भूमंडलीकरण शब्द का व्यापक प्रसार और ब .ता प्रभाव सह ा ही सम ा में आने वाली घटना है। यह अलग बात है कि बा ारी कट्टरवाद के समर्थक भूमंडलीकरण को एक वै ारिक तथा नीतिगत विशेष रूप देकर इसे पिछले कुछ दशकों की स्वतंत्र पह ान बनाने की कोशिश कर रहे हैं कि आ ा संसार मे ंप्र ालित शक्ति संतुलन में बा ाराधारित भूमंडलीकरण के समर्थकों

का दबदबा काफी ब़ा हुआ है, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में विश्वव्यापी कारोबार का अत्यधिक व्यापक प्रसार अपेक्षाकृत नयी बात है।"[24]

भूमंडलीकरण की वर्तमान लोकप्रियता के कई आधार हैं, इसकी व्यापकता और वर्तमान समय की महत्वपूर्ण समस्याओं से इसका ुड़ाव भूमंडलीकरण को न केवल संदेहास्पद बना ुका है बल्कि विवादास्पद भी बना ुका है। एक तरफ तो इसे समू े विश्व के विकल्पहीन नियति के रूप में देखा ा रहा है वहीं दूसरी तरफ विश्व व्यापी कुविकास के पर्याय के रूप में भी देश दुनिया में आवाज़ उठ रही है। आ ा ाल रही प्रत्येक विषय की वि ारणा का संबंध किसी न किसी रूप में भूमंडलीकरण से ुड़ ाती है।

भूमंडलीकरण के अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप के गहन विश्लेषण से एक बात तो साफ है कि भूमंडलीकरण सर्वग्राही और सर्वग्रासी प्रक्रिया है। इसके कुछ प्रभाव सकारात्मक तो कुछ नकारात्मक हैं। यह भी सत्य है कि लाभ की अपेक्षा हानि का परिमाण अधिक है। वास्तव में भूमंडलीकरण के अंतर्गत कुछ ऐसी बातों का उल्लेख है िनकी कभी-कभी सतही तौर पर काफी म ाबूत अपील होती है। कौन नहीं ाहेगा कि सारी दुनियाँ आपस में ुड़े, गाँव शहरों में बदले, भौतिक सुख-सुविधाएँ आम न तक पहुँ े, सार्व ानिक संसार का दायरा व्यापक बने, सारी मानवता एक दूसरे के संपर्क में आए और उनसे लाभान्वित हो, विभिन्न वि ारों, कलाओं, संस्कृतियों आदि का समन्वित ज्ञान प्राप्त हो। प्रत्येक व्यक्ति की ख्वाहिश होती है कि वह राष्ट्रीय सीमाओं की बंदिशों को लांघ ाए। इस संबंध में गाँधी का वि ार था कि वे अपने घर की सब खिड़कियों को दुनिया के कोने-कोने से आनेवाली बयार के लिए खुला रखना ाहेंगे, परंतु फिर भी अपने पैरों पर खड़े रहने की शक्ति बनाए रखना ारूरी है, और इन बाहरी बयारों के ते ा ोकों से अपने पैरों से उखड़ नहीं ाना होगा। यह एक सह ा अभिव्यक्ति है आपसी संपर्क, संसर्ग और मानवीय सद्भावना की मानवीय कामना है। पर इस सद्भावना का वर्तमान भूमंडलीकरण से बहुत दूर तक कोई लेना देना नहीं है।

भूमंडलीकरण का ो सकारात्मक प्रभाव है वह यह कि इसने पहली बार हम (भारतीयों) को विश्व रा ानीति को ाानने पह ाानने की शक्ति प्रदान की। ग्लोबल होने का ही प्रभाव है कि आ ा हमारे पास भी लगभग वे सभी तकनीक एवं प्रौद्योगिकियाँ हैं ो अन्य विकसित राष्ट्रों के पास है और हमारी गणना विश्व के गिने- ुने देशों में होने लगी है। पिछले कुछ वर्षों में भारत की अर्थ व्यवस्था इतनी सुदृ. हो गयी है कि वह विश्व पटल पर एक महाशक्ति के रूप में उभरा है। आ ा विदेशों में भारतीय कंपनियाँ अपना पैर ामा रही है, ि ससे भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़ी तेज़ी से इ ााफा हुआ है। भूमंडलीकरण की एक बहुत बड़ी देन यह भी है कि इसने अब तक ो हाशिए पर थे उन्हें गंभीरता के साथ केंद्र में लाया है। नारी शिक्षित हो रही है, परंपरागत शोषण से मुक्ति पा रही है, अपनी अस्मिता की तलाश करने की शक्ति पा ुकी है, अब स्त्री 'पावर वूमेन' के रूप में तैयार है। स्त्रियों, दलितों को न केवल सदियों से दबाया गया बल्कि उन्हें शिक्षा से भी वं ित किया गया, पर उदारीकरण की नीतियों के फलस्वरूप ब.ते बाज़ार ने सभी को औप ाारिक-अनौप ाारिक रूप से शिक्षित करने का प्रयास किया है। कहना गलत न होगा कि सत्ता से लेकर शासन तक, शिक्षा से लेकर नौकरी तक स्त्रियों एवं दलितों की भागीदारी में तेज़ी से इ ााफा हुआ है। आ ा मायावती, इंदिरा नुई, कल्पना ाावला, साइना नेहवाल, ऐश्वर्या राय, एक आदर्श मॉडल के रूप में स्त्री समा ा में मौ ाूद है, ि न्हें देखकर प्रत्येक स्त्री के अंदर स्वस्थिति अनुसार कुछ करने का ोश, ाुनून पैदा हो रहा है।

सदियों से दमित और कु ाली ाानेवाली ाातियों के अत्या ाार के खिलाफ कुछ नि ाी संगठनों ने तेज़ी से आवाज़ उठाई है। दलित विमर्श ो सदैव हाशिए पर रहा है वह आ ा केंद्र में आ गया है। दलित ााति सू ाक शब्दों के प्रयोग पर सरकार ने सख्त कानून भी बनाया है। अब दलितों का भी अपना एक संगठन बना हुआ है और वे भी विकास की इस अंधी दौड़ में तेज़ी से आगे ब. रहे हैं तथा सदियों से खो ुके अपने अस्तित्व को दोबारा पाने के लिए सार्थक ाद्दो ाहद कर रहे हैं।

भूमंडलीकरण के मुख्य उपकरण ‘बा ारवाद’ की एक सबसे बड़ी देन यह भी है कि इसने महंगे वस्त्रों एवं वस्तुओं के बरक्स सस्ते वस्त्रों एवं वस्तुओं का विकल्प प्रदान किया है, ि ससे गरीब लोग भी उन सुविधाओं का भोग कर पाने में सफल हो रहे हैं ो पहले धनी वर्गों तक ही सीमित था। ाइना बाज़ार ने इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

20 वीं सदी के अंतिम दशक में मनुष्य का रूपांतरण आर्थिक मानव के रूप में होने लगा था। भूमंडलीकरण ने इस आर्थिक सिद्धांत को बहुत ही गहराई से पकड़ा। मदाम स्ताल ने भी आर्थिक प्रक्रिया को सामाि क विकास एवं विस्तार का सबसे बड़ा कारण माना था। इसने प्रत्येक व्यक्ति को बा ार की रूरत के अनुसार बदलकर रख दिया। अब परंपरागत वस्त्र, रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा एवं भाषा प्रकारांतर से समस्त ीवन शैली को बहुत कुछ बा ार के मुताबिक बदल दिया। ‘आर्थिक आधार बदल दो सब कुछ बदल ायेगा’ इस फेनोमिना को भूमंडलीकरण ने दोनों हाथों से पकड़ा और सब कुछ पलट कर रख दिया। आ ा दुनिया आर्थिक रूप से एक-दूसरे में घुली-मिली नज़र आती है। वैश्विक स्तर पर खुली स्पर्धा ने नयी-नयी ीज़ों के आविष्कार उद्यमी प्रतिभाओं और तकनीकी नवोन्मेषों के लिए वातावरण बनाया है। आ ा बालीवुड के अभिनेता हालीवुड और हालीवुड के अभिनेता बालीवुड में काम करते नज़र आते हैं। व्यापक स्तर पर भारतीय नर्सें विदेशों में काम कर रही हैं। अतः देखा ा सकता है कि भूमंडलीकरण का सामाि क और सांस्कृतिक मामलों पर व्यापक प्रभाव पड़ा है, पुरानी व िनाएँ तेज़ी से टूटी हैं, ो लोग साधन विपन्न थे वे साधन संपन्न हो गये हैं। मनोरं ान ागत से अछूता रहनेवाला समा ा आ ा उ ा स्तर के मनोरं ान का सुख भोग कर रहा है। लोगों का बड़े पैमाने पर ज्ञान और तकनीकी की दुनिया में प्रवेश हुआ है। भूमंडलीकरण ने समस्त दुनिया ो अब एक बाज़ार के रूप में तब्दील हो ुकी है के द्वार सभी लोगों के लिए खोल दिया है।

भूमंडलीकरण की तमाम खूबियों के बाव ूद उसका विरोध किया ाना आवश्यक है। सकारात्मक प्रभाव की अपेक्षा नकारात्मक प्रभाव कहीं अधिक है। इस

संबंध में लोगों को यह स्पष्ट सम ा रखनी ाहिए कि उदारीकरण, आर्थिक सुधार, बा ारीकरण तथा औद्योगिक विकास और नि ीकरण की नीतियों के ालते प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय में भले ही वृद्धि हुई हो पर दुनिया में विषमता ब ़ी है। गरीबी-अमीरी की खाई और ौड़ी हुई है। संसाधनों में अभूतपूर्व वृद्धि के बाव ूद आम ानता की तकलीफें ब ़ी हैं। भूमंडलीकरण की प्रभाववादिता पर वि ार व्यक्त करते हुए कमल नयन काबरा टिप्पणी करते हैं कि "इस किस्म के भूमंडलीकरण के सांस्कृतिक मायने वास्तव में एक उपभोक्तावादी, लिप्सापूर्ण भोगवादी, नि ी स्वार्थ को कुशलता का पर्याय घोषित करने तथा नि ी और तथा कथित राष्ट्रीय हितों के लिए बे ि ाक क्रूरतम और बर्बर तरीके अपनाने की तत्परता के रूप में प्रकट हो रहे हैं। इनके फलस्वरूप संस्कृति का एक ओर तो व्यावसायीकरण हो रहा है और दूसरी ओर सारी दुनिया का आपस में गहरे ुड़ाव वाला भूमंडलीकरण होता अभि ात्य वर्ग (ि से पर-राष्ट्रीय पूँ ीपति वर्ग भी कहा ाता है) अपने को आम आदमी से हर अर्थ में काटकर एक विभेदकारी अपसंस्कृति का प्रसार कर रहा है। सीमित नि ी स्वार्थ को ाय ा और कुशलता का पर्याय मानने वाला रूप स्पष्ट है कि भूमंडलीकरण संस्कृति के 'वसुधैव कुटुंबकम्' के आदर्श वाक्य से मेल नहीं खाता है।"[25]

भूमंडलीकरण पर बल देने वाला **W.T.O** बहुपक्षीय समानतापूर्ण आर्थिक संबंधों की बात करता है। गौरतलब है कि इन संबंधों की शर्तें भी एकतरफा रूप से निर्धारित की ाती हैं ि सका व्यापक परिणाम यह निकलता है कि भूमंडलीकरण कुछ विकसित राष्ट्रों के व र्स्व और अनेक देशों की गुलामी, उत्पीड़न, परनिर्भरता और पराभव आदि का आधार बन ाता है। विभिन्न राष्ट्रों का, आम ानता का अथवा कंपनियों का आपसी संबंधी दूर तक सहयोगात्मक नहीं बन पाता है। विकसित राष्ट्रों के मुकाबले विभिन्न देशों में अवस्थित आर्थिक इकाइयाँ व्यावहारिक स्तर पर दूसरे देशों की इकाइयों से आपसी लेन देन करती हैं। राष्ट्रीय सरकारें इन संबंधों को बेकाबू तथा लगाम-विहीन बनाकर भूमंडलीकरण को ब ़ावा देती हैं।

ध्यातव्य है कि इस तरह विकसित भूमंडलीकरण समान रूप से सर्व सुलभ, समतामूलक सर्वव्यापी तथा सर्वहितकारी बनने के ब ााय विषमतापूर्ण, ानसंहारक तथा सर्वनाशक बन ााती है। ि ासका व्यापक प्रभाव विश्व के 6 अरब से अधिक आबादी के बहुत बड़े भाग पर इतना गहरा और बुरा पड़ता है कि वह अंतर्राष्ट्रीय स्तर की बात तो दूर स्थानीय स्तर (राष्ट्रीय स्तर) पर भी बाकी समा ा से बहुत कमतर संपर्क और लेन-देन बना पाता है।

भूमंडलीय अर्थ-व्यवस्था ने आम ान के स्वाथ्य, शिक्षा एवं ब ाों के कुपोषण की मात्रा में अभूतपूर्व वृद्धि की है। स्वतंत्रता, समानता, भूमंडलीकरण का नारा है। पर दोनों बातें इसके केंद्र से नदारद हैं। आ ा भी 46% ब े भारत ौसे देश में कुपोषण के शिकार हैं तथा 50% से अधिक की ानता गरीबी रेखा के नी े का ाीवन ाीने के लिए अभिशप्त हैं। इसने युवाओं की आ ाीविका छीन ली है। ऐसे समय में गोस्वामी तुलसीदास ाी की यह पंक्ति ' ाीविका विहीन लोग सिद्धमान सो ा बस, कहै एक-एकन सो कहाँ ााइ का करी।' याद आती है। आ ा प े-लिखे शिक्षित बेरो ागारों की संख्या ब ी है। अंतर्राष्ट्रीय विकास की बात की ााय तो मानव विकास सू ाकांक के अनुसार 182 देशों के क्रम में भारत 134 वें स्थान पर है। यह विकास रिपोर्ट मुख्यतः स्वास्थ्य, शिक्षा और आय तीनों पर आधारित होता है। इस दौर में शहरों में बड़े-बड़े अस्पताल और शिक्षण संस्थानों की बड़ी संख्या ारूर खुली है पर गौर करनेवाली बात यह है कि ये शिक्षण संस्थान और अस्पताल दोनों सरकारी न होकर नि ाी संस्थाओं के हैं ि ासके कारण इनकी फीस एवं इला ा इतना महँगा होता है कि आम ानता इसके बारे में सो ा भी नहीं पाती है। प्रकारांतर से यह विकास केवल 25% लोगों के लिए है और ये 25% लोग आम- ान नहीं वरन् शहर के धनी लोग हैं। पहले गाँधी ाी ने कहा था कि 'भारत गाँवों में बसता है' आ ा भी गाँवों में रहनेवाले लोगों की संख्या लगभग 75% है। गरीबी, क ा और भूख से बेहाल होकर हज़ारों किसानों ने ाो आत्महत्या की उसका सबसे बड़ा कारक भूमंडलीकरण है।

भूमंडलीकरण अब शहरों में ही नहीं अपितु समस्त भूभाग (ाल, स्थल, पर्यावरण, पशु, पक्षी, मानव) आदि सभी पर अपना पैर पसार ुका है। आ ा दूर-दूर तक पसरा बा ार सामा िक ारूरतों की आपूर्ति के ब ाय अपने मुनाफे में लगा है।

इस संबंध में शम्भूनाथ सिंह की टिप्पणी अवलोकनीय है-"भूमंडलीकरण का दौर गतिशीलता और ामक-दमक के साथ तनावों से भरा है। ि ांदगी की इतनी नकली ारूरतें पैदा हो गयी हैं कि आदमी उन्हें पूरा करने के लिए दौड़ते-दौड़ते खोखला, तनाव भरा और बेदम हो ाता है। ... वह किसी ऊँ ो सो ा से गु ार नहीं पाता। देखा ा सकता है कि भूमंडलीकरण की संस्कृति मनुष्य का सामा िक दायित्वबोध मिटा रही है। उसे अधिकाधिक लाल ी बनाती ा रही है, लाल ा से भरा आदमी अंततः कैसा राष्ट्रवादी, कैसा समा ासेवी, कैसा साहित्यकार, कैसा कलाकार, कैसा फिल्म निर्माता, कैसा शिक्षक, कैसा डॉक्टर, कैसा वकील और कैसा रा ानेता बनेगा, यह अधिक स्पष्ट करने की ारूरत नहीं है।"[26]

भूमंडलीकरण का दूसरा सबसे नकारात्मक एवं खतरनाक प्रभाव सांस्कृतिक व र्स्व है। संस्कृति संस्कार का निर्माण करती है। अतः पूँ ाीपति देशों की सबसे बड़ी ाल यह है कि किस तरह से अपने सांस्कृतिक व र्स्व को तीसरी दुनिया के देशों पर स्थापित किया ाय। सांस्कृतिक व र्स्व को बनाने के लिए उन्होंने ि ान दो माध्यमों को केंद्रीयता दी वे ‘बा ार और मीडिया’ हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि बा ारवाद ाहाँ लोगों का टेस्ट (स्वाद) बदला है वही मीडिया ागत ने हमारे खान-पान, रहन-सहन, आ ार-वि ार, भाषा-बोली आदि को बेहद गहराई से प्रभावित किया है। विवाह ि ासे भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ा पह ान माना ाता था, आ ा खतरे में है। अब लोग ‘लिब इन रिलेशनशिप’ में अधिक दिल ास्पी दिखा रहे हैं। खान पान के स्तर पर बात की ाय तो सह ा ही देखा ा सकता है कि एक पंक्ति में बैठकर एक साथ खाने की प्रथा न केवल शहरों से लुप्त हुई है वरन् ग्रामीण क्षेत्रों से भी समाप्त होती ा रही है। भारतीय व्यं ानों के स्थान पर अब ाइनी ा व्यं ानों और अमेरिकी नूडल्स को यादा प्रमुखता दी ा रही है।

भूमंडलीकरण के कारण विभिन्न टेलीवि ान ैनलों द्वारा आकाशीय मार्ग से विदेशी संस्कृति हमारे शयन कक्ष में प्रवेश कर रही है। आ ा की नई पी ़ी इससे बुरी तरह प्रभावित हो रही है। दूसरा संवर्ग ऐसे लोगों का है ाो अपनी परंपरागत संस्कृति के संरक्षण को अपरिहार्य मानते हैं। ऐसे में सांस्कृतिक संक्रमण का खतरा उत्पन्न हो गया है। सांस्कृतिक साम्रा यवाद के बुनियादी आधार को स्पष्ट करते हुए शिलर महोदय ने लिखा है-"सांस्कृतिक साम्रा यवाद का विकास ऐसी व्यवस्था में होता है ाहाँ एक-एक बाज़ार की आधिपत्य हो, उत्पादन का ारित्र और उसकी शर्तें केंद्र से तय कर बाहर की ओर भे ाी ााती हों। राष्ट्रीय सत्ताएँ मौ ाूद तो हों पर विश्व व्यवस्था की विशुद्ध कार्य पद्धति से उनका टकराव न हो। सामान्य रूप से उनका हस्तक्षेप उन रा यों के व ास्विशाली वर्गों को लाभ पहुँ ााता हो (या पहुँ ााने की कोशिश करता हो)। व्यवस्था को ब ााए रखने के लिए दुनिया के पैमाने पर तथा हर घटक रा य के भीतर, बी ा की एक परत या ऐसी कई परतों को बनाए रखना ारूरी होता है। तीसरी शक्तियाँ, मध्यमवर्ग और सू ाना के केंद्र में बहुलवाद व्यवस्था के सुरक्षा कव ा हैं।"[27]

पर्यटन सांस्कृतिक साम्रा यवाद को ब ़ावा देने वाला मुख्य घटक है। इसके माध्यम से बहुसंख्यक विदेशी एशिया और भारत में आकर देह व्यापार ैसे व्यवसाय को फैला रहे हैं िाससे भारतीय संस्कृति के ऊपर बहुत बड़ा खतरा मंड़राने लगा है। कहने की आवश्यकता नहीं कि पिछले दस वर्षों में देह व्यापार करने वाली काल गर्लों की संख्या में तेज़ी से वृद्धि हुई है। शर्मनाक बात यह है कि इस व्यापार में शामिल होनेवाले लोगों में अधिकतर विश्वविद्यालय की छात्राएँ शामिल हैं, िाससे न केवल खुले सेक्स को ब ़ावा मिल रहा है अपितु एड्स ैसी खतरनाक बीमारी को फलने-फूलने का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ है। आ ा प्रतिवर्ष करोड़ों स्त्रियों की खरीद-फरोक्त होती है।

इस प्रकार समू ाी भूमंडलीय प्रक्रिया को एक सांस्कृतिक हमला कहना गलत न होगा। आ ा के समय में राष्ट्रीय ाीवन मूल्य और राष्ट्रीय संस्कृति अंतर्राष्ट्रीय पूँ ाीवादी व्यवस्था के विकास के नियमों के अधीन है। िासका घातक परिणाम यह

होता है कि सांस्कृतिक भूमंडलीकरण के निर्माण के लिए राष्ट्रीय एवं स्थानीय संस्कृतियों को अपना गला घोंटकर आत्मसमर्पण करना पड़ता है।

भूमंडलीकरण के नकारात्मक प्रभावों में रा ानीतिक व र्स्व को भी शामिल किया ाा सकता है। आ ा ाब विश्व एक 'ग्लोबल मंडी' में तब्दील हो ाुका है तब ऐसी व्यवस्था को सं ाालित करने का कार्य मुख्य रूप से विकसित राष्ट्रों की रा ानीतिक संस्थाएँ करती हैं। कहना गलत न होगा कि वर्तमान में यह रा ानीतिक सं ाालन अमेरिकी रा ानीतिक व्यवस्था द्वारा किया ाा रहा है। आ ा किसी भी विकास के लिए, महत्वपूर्ण निर्णयों के लिए विकासशील देशों को अमेरिकी शासन व्यवस्था का दरवा ाा खटखटाना पड़ता है। भारत और अमेरिका का परमाणु सम ाौता इसका वलंत उदाहरण है। इस प्रकार भूमंडलीकरण सभी प्रकार की गतिविधियों को सं ाालित करने की शक्ति राष्ट्रीय सरकार के स्थान पर अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं (विश्व बैंक, अ.मु.को.) को देता है। ाो अप्रत्यक्ष रूप से बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा नियंत्रित होते हैं। आ ा अंतर्राष्ट्रीय संगठन 'विश्व व्यापार संगठन' सभी देशों के लिए नियमावली बनाता है और सभी सरकारों को ये नियम अपने-अपने देश में लागू करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। कई बार तो भूमंडलीकरण कई सरकारों को नि ाी क्षेत्रों को सुविधा प्रदान करने हेतु विधायी कानूनों और संविधान बदलने के लिए विवश करता है।

भूमंडलीकरण का एक बहुत बड़ा दुष्परिणाम यह सामने आया है कि कम ाोर देशों की भाषाओं का अस्तित्व खतरे में हैं। भूमंडलीय आंधी की अंधी दौड़ में अंग्रेज़ी समस्त विश्व की भाषाओं के ऊपर अपना व र्स्व कायम किये हुए है। भारत के संदर्भ में ही यदि बात की ााय तो कहा ाा सकता है कि भारत एक बहुभाषी देश है। सन् 1951 की ानगणना के अनुसार भारत में 179 भाषाएँ एवं 44 स्थानीय भाषाएँ थीं। पर आ ा देखा ाा सकता है कि मुख्य भाषा के रूप में काबि ा हिंदी स्वयं हाशिए पर खड़ी है। सं ाार तकनीकी के इस युग में समस्त ज्ञान इंटरनेट में समाहित है और इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए एकमात्र भाषा अंग्रेज़ी का ज्ञान ही अभीष्ट है। एक सर्वे के मुताबिक वर्तमान समय में अंग्रेज़ी बोलनेवालों में भारत दूसरे

स्थान पर है। हिंदी 10 रा यों की मुख्य भाषा एवं समू ो भारत की राष्ट्रभाषा का द ाा प्राप्त करने के बाव ूद समस्त एकेडमिक कार्य, समस्त सू ानाएँ अंग्रेज़ी में ही प्राप्त होती हैं। हम लोग प ़ाई हिंदी में करते हैं पर अंक पत्र अंग्रेज़ी में दिये ााते हैं। अतः कहने की आवश्यकता नहीं कि अंग्रेज़ी का व र्स्व समस्त भाषाओं के ऊपर मंडरा रहा है। लोक भाषाओं को तो सर्वाधिक खतरा है। आ ा हिंदी भाषा और शिक्षक की स्थिति निराला के शब्दों में कहें तो 'ब्राह्मण के बी ा ाो अछूत' ही ारितार्थ होता है। यहाँ ब्र ाकुमार पांडेय की टिप्पणी को उल्लेखित करना अपेक्षित ाान पड़ता है-"भारत को एक सा ाि श के तहत अंग्रेज़ी भाषा-भाषी देश कहा ाा रहा है। यहाँ के अंग्रेज़ी के अति साधारण लेखकों को तरह-तरह के पुरस्कारों से नवा ाा ाा रहा है। अंग्रेज़ी को रो ाी-रोटी की भाषा बताकर बड़े पैमाने पर महानगरों, नगरों, कस्बों यहाँ तक कि गाँवों में अंग्रेज़ी माध्यम के स्कूल बड़े पैमाने पर खोले ाा रहे हैं और गरीब ानता की बड़ी कमाई इन स्कूलों में प ़नेवाले ब ोों पर ख र्ा हो रही है। शहरों के हर ाौक- ाौराहों पर धारा-प्रवाह अंग्रेज़ी बोलने और लिखने की शिक्षा देनेवाले को ाािंग संस्थानों के इस्तेहार नज़र आते हैं। अमेरिका और इंग्लैंड के नामी विश्वविद्यालयों की शाखाएँ भारत में खोली ाा रही हैं और लोग इन विश्वविद्यालयों में नामांकन करा रहे हैं।"[28]

भूमंडलीकरण के प्रथम ारण में लोग ाहाँ क्लर्क निर्माण हेतु अंग्रेज़ी को भारतीयों के ऊपर थोपा था, उस समय उनकी मानसिकता को अंग्रेज़ियत के रंग में ालना था। पर आ ा भूमंडलीकरण के दूसरे ारण में अमरीकी अंग्रेज़ी देश की मुख्य भाषा बनी हुई है। अंग्रेज़ी को संपूर्ण संसार पर लागू करके, भाषाई दासता को स्थापित कर एक क्षत्र साम्रा य बनाने की पुर ाोर कोशिश हो रही है। खेद की बात है कि भारत ाो हिंदी भाषा-भाषी देश है, वहाँ की संसद के कामका ा की भाषा हिंदी न होकर अंग्रेज़ी है। बड़े लोग यह नारा लगाते नहीं थकते कि अंग्रेज़ी के बिना भारत एक विकसित राष्ट्र नहीं बन सकता। पर हमें यह याद रखना ााहिए कि विकसित राष्ट्रों की सू ाी में शामिल ाापान, ाीन, रूस देश अंग्रेज़ी के बल पर नहीं अपितु अपनी राष्ट्रीय भाषा ाीनी, ाापानी, रूसी के बल पर यह मुकाम हासिल किया है।

निष्कर्षतः कहा ाा सकता है कि भूमंडलीकरण पूँ ािवाद का नया ोहरा है। ाो परिस्थिति के अनुरूप अपना ोहरा बदलने में माहिर है तथा अपने लाभ एवं हित साधन हेतु किसी भी सीमा तक ााने को तैयार है। पहले यह साम्रा यवाद या उपनिवेशवाद का मुखौटा लगाकर कम ाोर और विभा ात राष्ट्रों में अपना साम्रा य स्थापित किया। इससे विश्व के समस्त देश शासक और शासित देशों में विभा ात हो गये। शासक देशों ने शासित देशों का ाी भर शोषण किया। वर्तमान में यह भूमंडलीकरण का मुखौटा पहनकर बा ाार एवं मीडिया के माध्यम से समस्त ानता को अपने आगोश में ले लिया है। यह एक ऐसी अवस्था है ाो दूर से देखने पर अत्यन्त सुहानी और फलदायी लगती है पर ौसे ही न ादीक आकर देखा ााता है उसके उद्देश्य देखने में एक सुंदर शब्द भले ही लगता है पर वास्तव में यह एक भयानक अर्थों वाला शब्द है। यह शब्द बड़े और पूँ ाीवादी देशों द्वारा गरीब देशों पर थोपा गया है। वैश्वीकरण से केवल पूँ ाीवादी देश ही मन ााहा लाभ पा रहे हैं। गरीब एवं कम ाोर देश तो वैश्वीकरण के ााल में कठपुतली बनकर रह गए हैं। वे तो सिर्फ थोपी हुई शर्तों का ही पालन करने को म ाबूर हैं। वे ााहते हुए भी कुछ कर नहीं सकते।

* * *

संदर्भ

[1] कमलनयन काबरा, भूमंडलीकरण : वि ार, नीतियाँ और विकल्प, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली 2005-पृ.81

[2] मैने ार पांडेय से साक्षात्कार, भाषा और भूमंडलीकरण-पृ.9

[3] कमल नयन काबरा, भूमंडलीकरण : वि ार, नीतियाँ और विकल्प-पृ.14

[4] प्रभा खेतान, बा ार के बी ा बा ार के खिलाफ

[5] कमल नयन काबरा, भूमंडलीकरण : वि ार, नीतियाँ और विकल्प-पृ.43

[6] कुमकुम संगारी, भाषा और भूमंडलीकरण (सं.रमेश उपाध्याय)-पृ.31

[7] कमलनयन काबरा, भूमंडलीकरण : वि ार, नीतियाँ और विकल्प-पृ.5-6

[8] डॉ.रविप्रकाश पाण्डेय, वैश्वीकरण और समा ा, नवंबर 2005

[9] अभय कुमार दुबे, भारत का भूमंडलीकरण-पृ.255

[10] सरो ावर्मा, भूमंडलीकरण बनाम वसुधैव कुटुंबकम, समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर-दिसंबर 2008

[11] अभय कुमार दुबे, भारत का भूमंडलीकरण-पृ.35

[12] कथादेश, मा ि 2007-पृ.31

[13] उद्भावना, अक्तूबर 06, मा ि 07-पृ.35

[14] स ि ादानंद सिंहा, भूमंडलीकरण की ुनौतियाँ-2003

[15] कमल नयन काबरा, भूमंडलीकरण : वि ार, नीतियाँ और विकल्प-पृ.25

[16] अभय कुमार दुबे, भारत का भूमंडलीकरण-पृ.49

[17] सरो ा वर्मा, भूमंडलीकरण बनाम वसुधैव कुटुंबकम्, समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर-दिसंबर 2008

[18] समीर अमीन, भूमंडलीकरण के युग में पूँ ीवाद-पृ.46

[19] रवि श्रीवास्तव, इतिहास बोध, ानवरी 2006-पृ.46

[20] वागर्थ (पत्रिका), दिसंबर 2003-पृ.54, संपादक-वि ाय बहादुर सिंह

[21] वागर्थ (पत्रिका), दिसंबर 2003-पृ.54, संपादक-वि ाय बहादुर सिंह

[22] वागर्थ (पत्रिका), दिसंबर 2003-पृ.55, संपादक-वि ाय बहादुर सिंह

[23] वागर्थ (पत्रिका), दिसंबर 2003-पृ.58-59, संपादक-वि ाय बहादुर सिंह

[24] कमल नयन काबरा, भूमंडलीकरण : वि ार, नीतियाँ और विकल्प-पृ.43

[25] कमलनयन काबरा, भूमंडलीकरण : वि ार, नीतियाँ और विकल्प-पृ.44

[26] शंभूनाथ सिंह, भूमंडलीकरण की संस्कृति, कथादेश ानवरी 2010, संपादक-हरिनारायण

[27] वागर्थ (पत्रिका), दिसंबर 2003-पृ.60

[28] ब्र ाकुमार पांडेय, भूमंडलीकरण, भारत की भाषा समस्या और डॉ.लोहिया, वाक् पत्रिका, फरवरी 2010-पृ.102

तृतीय अध्याय

हिंदी कहानियाँ और भूमंडलीकरण

तृतीय अध्याय

हिंदी कहानियाँ और भूमंडलीकरण

‘साहित्य’ समा ा का दर्पण माना ाता है। इस कारण समा ा और साहित्य में गहरा संबंध देखने को मिलता है। साहित्य ि ातना ‘समय और समा ा’ को प्रभावित करता है, उससे कहीं अधिक प्रभावित भी होता है। आ ा ाब संसार एक ‘मंडी’ में तब्दील हो ुका है, तब ऐसे में न केवल समा ा का अस्तित्व खतरे में नज़र आ रहा है, बल्कि समा ा के निर्माण में अहम् भूमिका निभानेवाले सामाि ाक संबंधों के ऊपर भी भारी शामत आई हुयी है। भूमंडलीय पूँ ाीवादी व्यवस्था ने पहले तो मनुष्य को संवेदनहीन बनाकर एक मशीन के रूप में रूपायित किया। फिर मनुष्य-मनुष्य के बी ा बनने वाले मानवीय संबंधों को समाप्त कर समा ा का मूल ाँ ाा ही तोड़ डाला।

आ ा भूमंडलीकरण के दौर में मनुष्य संयुक्त परिवार से बड़ी तेज़ी से बेदखल होकर एकांकी ाीवन ाीने की राह पर है। स्त्री-पुरुष संबंध ाो एक स्वस्थ परिवार की नींव डालते हैं के सामं ास्य में लगातार गिरावट देखी ाा रही है। सांस्कृतिक क्षरण के इस दौर में स्त्रियाँ बा ाार द्वारा दिखाए ाा रहे लुभावने सपने को साकार करने के लिए अपने शरीर को ही विकास की सी ़ाी बना रही है। नि ाी कंपनियों से लेकर शिक्षा व्यवस्था समेत फिल्मों तक लगातार उनका शारीरिक एवं मानसिक शोषण किया ाा रहा है। वे लगातार एक सांस्कृतिक की ाड़ में धँसती ाा रही है ाहाँ से ाहकर भी निकल पाना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन भी है। विवाह ैसी संस्थाएँ ‘संकट में’ पड़ गयी हैं। ‘ग्रीन हंट’ नाम देकर आदिवासियों एवं किसानों को मारा ाा रहा है।

भूमंडलीकरण के औद्योगिक निकायों ने न केवल बड़े पैमाने पर प्राकृतिक दोहन किया अपितु ैवविविधता को भी व्यापक पैमाने पर नष्ट किया है। साथ ही ंगलों में रहनेवाले एक बहुत बड़े समुदाय के प्राकृतिक आवासों एवं भो न को छीना है। ि सका परिणाम नक्सलवादी आंदोलन के रूप में सामने आया है। भूमंडलीकरण का सबसे बड़ा नारा ‘गरीबी मिटाओ’ एकदम फिसिड्डी साबित हो ुका है। कहना गलत न होगा कि अब गरीबी मिटाने के स्थानपर गरीबों को ही मिटाया ा रहा है। सैकड़ों किसान गरीबी से त्रस्त होकर आत्महत्या कर रहे हैं।

नव्य पूँ ीवादी व्यवस्था ने समा के हर हिस्से को, प्रत्येक कोने को अपनी गिरफ्त में ले लिया है। इसका व्यापक प्रभाव साहित्य गत पर पड़ा है। मानवीय संवेदना एवं सामा िक यथार्थ को कौसलपूर्ण ंग से अभिव्यक्ति करनेवाली विधा कहानी ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया है। आ के युवा कहानीकार अपनी व्यापक एवं पैनी दृष्टि से समा पर पड़ने वाले भूमंडलीकरण प्रभाव के विविध स्वरूपों को बड़े ही यथार्थपरक ंग से ि त्रित करने का प्रयास कर रहे हैं।

कहानी आधुनिक काल की एक सशक्त विधा है। इसका प्रारंभ सरस्वती पत्रिका के प्रकाशन (1900 ई.) से माना ाता है। हिंदी की प्रारंभिक कहानियों में इंदुमती (1900 ई.), ग्यारह वर्ष का समय (1903), दुलाई वाली (1907) आदि का नाम लिया ा सकता है। पर कहानी का उत्कर्ष काल प्रेम ंद युग को माना ा सकता है। इस काल की कहानियाँ सामा िक यथार्थ से ुड़ने का प्रयास करती हैं। इस दृष्टि से ठाकुर का कुआँ, पूस की रात, कफन आदि कहानियों के नाम गिनाए ा सकते हैं। प्रेम ंदोत्तर युग के कहानीकार ि न्हें नयी कहानीकार कहा ाता है ने पारिवारिक संत्रास एवं पारिवारिक विघटन को केंद्र बनाकर कहानियाँ लिखीं। अभी तक ो कहानी सिर्फ कथा कहती थी, या कोई रित्र पेश करती थी अथवा एक वि ार को टका देती थी, वही... ीवन के प्रति एक नया बोध गाने लगी। "समकालीन कहानी हाँ समा और राष्ट्र के संदर्भों में अधिक गंभीर और बेबाक सवालों के सामने खड़े होने की कोशिश कर रही है। एक ओर यदि वह स्थितियों की संवेदन शून्यता की गहरी पड़ताल में प्रवृत्त है तो वहीं वह सामंती अंतर्विरोधों से

लेकर स्त्री उत्पीड़न और धार्मिक उन्माद की आँधी में साधारण आदमी की नियति को परिभाषित करना ाहती है।"[1]

नयी कहानी की विकास यात्रा का प्रारंभ 6 वें दशक में कहानी पत्रिका (1955) के प्रकाशन से हुआ। इन कहानीकारों में रेणु, शिवप्रसाद सिंह, मार्कंडेय, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, अमरकांत तथा महिला कथाकारों में-उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, शिवानी आदि प्रमुख हैं। नयी कहानी से हमारा तात्पर्य उन कहानियों से है ो सही मायने में कलात्मक निर्माण है और ीवन के लिए उपयोगी होने के साथ-साथ उसके किसी-न-किसी नवीन पहलू पर आधारित हैं।

यह सर्वविदित है कि भूमंडलीकरण की समस्या 8 वें दशक की है। अतः यहाँ इसका मूल्यांकन 8 वें दशक और उसके बाद की कहानियों को ध्यान में रखकर किया ाायेगा। पर ध्यातव्य है कि मैने ार पांडेय इसे सामंतवाद का नया मुखौटा कहते हैं। अर्थात् भूमंडलीकरण का प्रथम युग (सामंतवाद) ही है, िसको लेकर प्रेम ंद ने ठाकुर का कुआँ और पूस की रात ैसी महत्वपूर्ण कहानी लिखी तो अमरकांत ने डिप्टी कलेक्टरी, बहादुर, िंदगी और ोक। "विगत प ीस वर्षों में हिंदी कहानी बहुत समृद्ध हुई है। उसमें वस्तु और शिल्प दोनों के स्तर पर बड़ी विविधता आयी है। कारण, इस कालावधि में कहानीकार की ेतना में उसका व्यक्तिगत अनुभव छाया रहा है और वह उसी व्यक्तिगत अनुभव की अभिव्यक्ति देता रहा है। व्यक्तिगत अनुभव की केंद्रीयता उस पूँ ीवादी अर्थ-व्यवस्था की देन है, िसमें व्यक्ति केंद्रीय महत्व की ीज़ बन गया है और समा ा हाशिये पर पड़ गया है। इसीलिए इस काल की कहानियों के पात्र, ाहे वे स्त्री हों या पुरुष, अपनी अस्मिता, स्वायत्तता और विशिष्टता के लिए अत्यधिक बे ैन दिखाई देते हैं-स्त्री पात्र विशेष रूप से।"[2]

सामंतवाद का नवीन संस्करण, 'पूँ ीवाद', बा ारवाद एवं मीडिया व स्वि आदि फेनोमिनों को लेकर 8 वें दशक एवं उसके बाद के कथाकार लेकर सामने आये हैं। समकालीन कथाकारों में यदि उदय प्रकाश, काशीनाथ सिंह, मन्नू भंडारी, अखिलेश, ंदन पांडेय आदि को छोड़ भी दिया ाए तो भी बहुत सारे ऐसे

कथाकार हैं ो अपनी कहानियों में 'भूमंडलीकरण की रासायनिक क्रिया' को ला रहे हैं। और आम ानता की पीड़ा को आयाम देने की कोशिश कर रहे हैं। इन र ानाकारों में-कैलाश बनवासी, एस.आर.हरनोट, सत्यनारायण पटेल, ारण सिंह पार्थक, हरिभटनागर, राकेश कुमार सिंह, सुभाष ंद्र कुशवाहा, प्रियदर्शन, प्रदीप पंत, महुआ मां ी, रा ाकुमार राकेश, उमाशंकर ौधरी, पंक ा मित्र, आलोक रं ान, मनो ा रूपड़ा, बंदना राग, मिनाक्षी बसेह आदि प्रमुख हैं। इन कथाकारों ने अपनी कहानियों में भूमंडलीकरण से प्रभावित ीवन और ागत के विविध अंगों पर सूक्ष्मता एवं गंभीरता से प्रकाश डाला है। िसमें उत्तर आधुनिकता की स्पष्ट ालक दिखाई पड़ती है। इन कहानीकारों की कहानियों को प.ने के बाद ऐसा लगता है ैसे-अभी तक वह कहीं छिपा था, ो आ ा सामने आ रहा है। आ ा हिंदी कहानी में व्यक्त हो रही र ानाशीलता के विशिष्ट स्वरूप को पह ाानना आसान काम नहीं है- "हिंदी कहानी आ ा िस पड़ाव से गु ार रही है, वह कब और किन कारणों से शुरू हुआ इसके बारे में मतभेद है, लेकिन यह एक नया पड़ाव है, इसे अब लगभग सभी मानने लगे हैं। िन साहित्य अभिरुि ायों के अनुसार हम पहले की कहानियों को विशेष तौर पर पसंद कर लेते थे और िन पाठ पद्धतियों के आधार पर उनके अर्थ को ग्रहण करते थे, उनमें बदलाव लाए बगैर हम आ ा की कहानी के साथ न्याय नहीं कर सकते, इस बात को अब बहुत सारे सुधी पाठक स्वीकार करने लगे हैं।"[3]

आ ा की कहानी की ो खास विशेषता है वह युगीन परिवर्तन के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित करना। आ ा की कहानी का केंद्रीय सरोकार वैश्वीकरण की प्रक्रिया के विस्तार के तहत हमारी ीवन स्थितियों और मानसिकता में आए बदलाव को प्रखर रूप में पेश करना तथा इस स्थिति में हमारी मानवीयता को ब ाये रखने की ो ुनौती पैदा हुई है, उसका यथेष्ट मनोबल और आस्थापूर्ण दृ.ता के साथ सामना करने की ारूरत पर बल देना।

उदारीकरण और नि ीकरण की नीतियाँ ो वैश्वीकरण के तहत अपनायी गयीं को लागू करते हुए खुले व्यापार और आर्थिक दौड़ को ब.ावा देने तथा इलेक्ट्रानिक सं ाार तंत्र के प्रसार से सामाि ाक एवं व्यक्तिगत ीवन ागत में कैसी

उथल-पुथल हो रही है, हमारे आत्मीय रिश्तों, पारिवारिक संबंधों, व्यक्तिगत अस्मिता को व्यक्त करने के लिए प्राथमिक सम ाी ाानेवाली हमारी इ छाओं, आकांक्षाओं, सफलता और सुख की परिकल्पनाओं तथा परंपरागत मूल्यों और संस्थाओं के साथ हमारे समीकरणों में क्या कुछ बदल रहा है इसे अपनी कहानी में पूरी ताकत के साथ रूपायित करना आ ा के कहानीकार का मुख्य दायित्व बन ाता है।

बा ाारवाद से उत्पन्न ुनौतियों के संदर्भ में समकालीन र ानाशीलता की विशिष्टता को पह ाानने वाले इस दृष्टिकोण की एक विशेषता यह भी है कि यहाँ व्यक्ति ारित्रों की मानसिकता के आलो ानात्मक-नाट्यात्मक प्रस्तुतीकरण को ही कहानी के कथ्य का मुख्य आधार माना ाता है। और इन मानसिकताओं के नैतिक भावनात्मक पहलुओं पर ही मुख्यतः न ार रखी ाती है। समकालीन र ानाशीलता की इस प्रकार की अवधारणा को ध्यान में रखा ाए तो इधर लिखी गई कुछ कहानियों को ैसे स्वयं प्रकाश की 'गौरी का गुस्सा' या ' लान पर', मनो ा रुपड़ा की 'सा ा-नासा ा' लक्ष्मेंद्र ौपड़ा की 'प्रेत प्रश्न', सं ाीव की 'लिटरे ार', महेश कटारे की 'सपने में नदी' और रमेश उपाध्याय की 'मेरा नाम क्या है' को उदाहरण के तौर पर पेश किया ा सकता है। इसमें अधिकांश कहानियों में किसी मध्यवर्गीय पात्र की मानसिकता में बा ाारवाद के ब ़ते प्रभाव के कारण कैसी-कैसी तब्दीलियाँ, विकृतियाँ हो रही हैं और किस प्रकार का अकेलापन, निकम्मापन और सारहीनता का अहसास उन्हें अंततः घेर लेता है, इसे पूरी तल्लीनता और गंभीरता के साथ प्रस्तुत किया ाता है।

हिंदी कहानियों में मौ ूदा पड़ाव की शुरुआत दरअसल बा ाारवाद के विकास से कुछ पहले अस्सी के दशक के आरंभ में ही हो ुकी थी। खास बात ाो है वह यह कि समकालीन र ानाशीलता के सामने खड़ी ुनौतियों को बा ाारवाद वे अधिक प्रखर और ाटिल बनाया है। परंतु बा ाारवाद को ही एकमात्र कारण मान लेना बेमानी होगी। इस संबंध में ओम प्रकाश ग्रेवाल की टिप्पणी दर्शनीय है-"हिंदी कहानी

के मौ ूदा पड़ाव की शुरुआत को एक दृष्टिकोण के मुताबिक अस्सी के दशक में समा ा के अंदर तेज़ी से ब ़ रहे सांप्रदायिकता के प्रभाव से भी ोड़ा ाता है।"[4]

आ ा सांप्रदायिकता को व्यापक पैमाने पर मिलने वाली सह ा स्वीकृत से हमारे सामा िक-सांस्कृतिक ताने-बाने की क्या स्थिति होगी और हमारा नागरिक-समा ा क्या रूप धारण करेगा, इसकी कल्पना करना कहानी ागत में हो रहे र ानाशीलता के लिए ि िंता का विषय बना हुआ है।

खैर सांप्रदायिकता को लगभग 25-30 साल पहले ही एक सामा िक सांस्कृतिक निर्मिति के रूप में उसकी सभी ाटिलताओं को निरूपित करनेवाली मुख्य कहानियाँ भीष्म साहनी की ाुटुपुटा और स्वयं प्रकाश की पार्टीशन से शुरू हो नीलकांत की 'एक एतका मेहमान', रमेश उपाध्याय की 'हँसो हिमा हँसों' तथा पंक ाविष्ट की 'नरो वा कुं ारो वा' से होता है और यह सिलसिला उदय प्रकाश की 'और अंत में प्रार्थना' तक निरंतर ालता रहा है। कुछ अन्य र ानाकारों ने भी अपनी र ानाओं में बा ारवाद और सांप्रदायिकता को आपस में एक दूसरे के पूरक के रूप में देखने का सूक्ष्म प्रयास किया है। शंकर की ' ागो देवता ागो' में बा ारवाद और सांप्रदायिकता के अंतर्संबंधों पर ही व्यापक ा र्ा की गई है।

भूमंडलीकरण के प्रमुख फिनोमिना (बा ारवाद, उदारवाद, साम्रा यवाद, मीडिया व र्स्व, संस्कृतिवाद) को समकालीन हिंदी कहानीकारों ने अपनी सम ा और सीमा के अनुसार विभिन्न डाइमेंशन से ाँ ा-पड़ताल करने की सफल कोशिश की है। अब हम हिंदी कहानियों में भूमंडलीकरण के विविध रूपों की ा र्ा करेंगे-

'बा ारवाद' की समस्या हालांकि कोई नई नहीं है। बाव ूद इसके 80 के दशक के बाद बा ार ने समा ा को व्यापक स्तर पर तरह-तरह से प्रभावित किया है। इसको लेकर अनेक कहानीकारों ने कहानियाँ लिखी है। कैलास बनवासी की कहानी 'बा ार में रामधन' प्रेम ांद की कहानी 'पूस की रात' का ही विकसित रूप कहा ाा सकता है ि ासमें विश्व के समस्त किसानों की स्थिति बा ार वाद के ालते दीन-हीन स्थिति में पहुँ ाी दिखाई गयी है। 'बा ार में रामधन' कहानी में किसान

(रामधन) बा ार में बैल बे ने नहीं बल्कि अपना पैर बे ने ाता है। आखिर प्रेम ंद का होरी भी तो खेत और बैल को अपनी मर ाद सम ाता था।

'पूस की रात' में हलकू खेती छोड़ने के लिए विवश हो ाता है। 'नील गाय' और कुछ नहीं सूदखोर, बा ार के सेठ एवं महा ान व्यापारी ही है। रामधन को भी बैलों की सही कीमत नहीं मिलती िास करण उसे तीसरी बार बा ार से वापस आना पड़ा। "रामधन मुन्ना को सम ा नहीं पा रहा था। सम ा भी नहीं सकता था। अब कैसे सम ाता इस बात को कि बैल हमारे घर की इ ात हैं... घर की शोभा हैं। और इससे ब ़कर हमारे पिता की धरोहर हैं। उस किसान का भी कोई मान है समा ा में िासके घर एक ोड़ी बैल नहीं है। कैसे सम ाता कि हमारे साथ रहते-रहते ये भी घर के सदस्य हो गये हैं। ो भी रूखा-सूखा, पे ा-पसिया मिलता है, उसी में खुश रहते हैं। वह मुन्ना से कहना ाहता था, तुमको इनका बेकार बंधा रहना दिखता है मगर इनकी सेवा नहीं दिखती? इनकी दया माया नहीं दिखती? और स ामु ा मुन्ना को कुछ दिखाई नहीं देता। उसके सिर पर तो ैसे भूत सवार है धंधा करने का रो ा-रो ा की ाक-ाक से उसकी पत्नी भी तंग आ ुकी है-रो ा रो ा के ां ाट से तो अ छा है कि ुप ाप बे ा दो, न रहेगा बांस न ब ोगी बांसुरी।"[5]

इस प्रकार किसान के घर से बैलों का ाना किसान के मृत्यु की सू ाना देता है। एक बारगी तो ऐसा लगता है कि आनेवाली पी ़ी को शायद बताना पड़ेगा कि बैल कैसे होते थे। वे लोग बैल का नाम लेते ही ठट्ठा लगाकर हसेंगे। बैलों का स्थान आ ा नि ाी कंपनियों के कृत्रिम एवं मशीनी बैल (ट्रैक्टरों) ने ले लिया है, िासे भारी-भरकम रकम अदाकर किसान घर लाता है, और लोन अदा न कर पाने के कारण तो कहीं गरीबी से बेहाल होकर आत्महत्या ैसे कुत्सित अपराध करने का बारंबार प्रयास करता है। रामधन तीन बार बैलों को बा ार से वापस लाता है। कहानी के अंत में ैसे बैल पूछ रहे हों "मान लो दाऊ या महारा ा तुम्हें ार ह ार दे रहे होते, क्या तुम बे ा दिये होते? रामधन ने ावाब दिया शायद नहीं, फिर भी नहीं बे ाता, उनके हाथ तुमको।" बे ाना तो पड़ेगा एक दिन। बैल कह रहे हैं आखिर तुम कब तक ब ाओगे रामधन? कब तक? ावाब में रामधन मुस्करा दिया-एक

बहुत फीकी और उदास मुस्कान... अनिशि ातता से भरी हुई... रामधन अपने बैलों से कह रहा है-‘देखो... हो सकता है अगली हाट में मुन्ना तुम्हें लेकर आए।’ बीड़ी का यही आखरी कश था और बु ाने लगी।"[6]

इस प्रकार हम देखते हैं कि किसान स्वे छा से नहीं बल्कि बा ार के दबाव के ालते बैलों को (िसे अपनी मर ाद सम ाता है) बे ाने के लिए विवश है। और अब तो बैल भी यह ान ुके हैं कि वे बा ार की रूरतों को पूरा करने में असमर्थ हैं। इसलिए भी हमें ाना होगा, समाप्त होना होगा।

ऐसी ही संवेदनात्मक अलाप वयां करती सुभाष ंद्र कुशवाहा की कहानी ‘बू ाड़खाना’ का मुख्य कथ्य यह है कि मनुष्य की मरती हुई संवेदनाएँ व्यक्ति को कितना खोखला बनाती ा रही हैं। बा ार ने पशु एवं मानव दोनों को एक वस्तु एवं माल के रूप में तब्दील कर डाला है। यू ा एंड थ्रो का फार्मूला आ ा हर ागह हर किसी पर लागू है। और उससे ितना हो सके पूँ ाी कमा लो- "बेटा! आ ा डॉक्टर साहब को बुला लाना। मुन्नी को बुखार है। ारे को मुँह नहीं लगा रही है। ाौधरी ने छोटे से कहा था-क्या फायदा? बापू! मुन्नी को बे ा दी िाए। कसाई दो दिन से आ रहा है। किसी दिन मर गई तो फेंकवाने में सौ-दो सौ लग ाएँगे। छोटा बेटा बोला था। कसाई को? ाौधरी ाीख पड़ा था।

तो क्या की ाएगा? अब क्या मुन्नी गाभिन होगी या दूध देगी। बेमतलब परेशान रहते हैं आप? आ ा मैंने कसाई को बुलाया है। हज़ार रुपये फिर भी दे रहा है। बड़े बेटे ने कुछ ऊँ ाी आवाज़ में छोटे भाई की बात का समर्थन किया था...। ‘मुन्नी बू ाड़खाने में कटेगी?’ ाौधरी के होंठ कांप गये थे। ेहरा तमतमा गया था। वह ग्राहकों से निगाह ुराते हुए, बेटों को घूर रहा था। उसका बायां हाथ अब भी मुन्नी की पीठ पर था। मुन्नी अपनी उदास आँखों से ाौधरी को निहार रही थी।"[7]

यह कहानी यह दर्शाती है कि पूँ ाीवादी नव्य साम्रा यवाद के दौर में मानवीय संवेदनाओं के अंत की घोषणा भी हो ुकी है। प्रत्येक व्यक्ति एवं वस्तु बा ार के बनाए प्रतिमानों पर खरा उतरना ाहिए। कोई वस्तु तभी तक ठीक है ाब तक वह बा ार की रूरतों को पूरा करने में सक्षम है अन्यथा वह बेकार है। यदि व्यक्ति की

संवेदनाएँ बा ार की उपयोगिता की कसौटी पर खरी नहीं उतरती तो उसका कोई मूल्य नहीं। उत्तर आधुनिक समय में सब कुछ मर ुका है, तो पशु भी मर गये हैं। उसके मृत्यु की घोषण भी की ानी ाहिए। आखिर नीत्से ने 'ईश्वर के मृत्यु' की घोषणा कर दी है। इतना ही नहीं एस.आर.हरनोट ने मशीनीकरण के इस युग में मनुष्य को संवेदनहीन एक मंत्र के रूप में स्वीकार किया है। उनका कहना है कि संवेदनाओं का मरना, मनुष्य के अंत की घोषणा है। बा ारवाद के इस युग में ी रहा संवेदनहीन मनुष्य, मनुष्य नहीं मशीन है। उनकी कहानी 'नदी गायब है' में ईश्वर को मरते हुए दिखाया गया है। अपनी एक अन्य कहानी 'अमानव' में उन्होंने दिखाया है कि सब कुछ तकनीकी हो गया, मनुष्य रहा ही कहाँ वह तो एकमात्र इं ेक्शन में तब्दील हो गया है। देखिए-

"पहले ाहाँ भ्रष्ट और स्वार्थी रा ानीति और धर्मान्धिता ने सब कुछ नष्ट कर दिया था, वहाँ एक ऐसी नयी पी़ी बिलकुल नये दिमाग के साथ पैदा हो रही थी, ो उम्र से पहले ही ावान और सयाने हो ाते थे। उनकी उम्र बमुश्किल से पैंतालीस साल होती, लेकिन वे इतने ी लेते मानो कई सदियों के मानव हों। सब कुछ मशीनी। इक्कीसवीं सदी ैसा कुछ नहीं, न दिन और न रात, न कोई मौसम, न नींद न भूख, न धर्म न संस्कृति, न लेखन, न साहित्य, न दलित-विमर्श, न स्त्री विमर्श, न बा ारवाद, न भूमंडलीकरण, माँ और पिता भी नहीं, न दादी-नानी, न कोई ा ी-ताई, भाई-बहन भी नहीं, न किसान, न उसके गाँव, न फसलें, न ौपालें, न पोखरें, गरीब और बू े भी नहीं। न पक्षियों के कलरव और न पशु- ानवरों की हुंकारें और दहाड़ें। रहने- ीने के अति आधुनिक तरीके। हर व्यक्ति के पास भूख-प्यास बु ाने के लिए नये-नये साधन। ब े पैदा करने के लिए इं ेक्शन। उठने-बैठने और ालने के लिए इं ेक्शन। उस युग में औरतों की कोई ारूरत नहीं रह गयी थी। वैसे भी लड़कियों को पेट में मार दिया ाता था। इसलिए इस युग में महिलाएँ ैसे नदारद हो गयी थीं। किसी मर्द में ारूरत के मुताबिक इं ेक्शन ठूसो और ब े पैदा कर लो।"[8]

यह कहानी दर्शाती है कि बा ारवाद अपनी उपयोगिता के अनुरूप व्यक्ति, समा ा एवं परिवेश को किस प्रकार बदला है। आ ा ो भी परिवर्तन मानवीय संवेदना में आए हैं उसके लिए सबसे बड़ा कारक बा ारवाद है। पहले हमारी ारूरतों के अनुसार बा ार वस्तुएँ निर्मित करता था पर अब बा ार की ारूरतों के अनुसार व्यक्ति की आवश्यकताएँ निर्मित होती हैं।

बा ार, भूमंडलीकरण और नये पूँ ीवाद ने साधारण मध्यवर्गीय आदमी को हाशिए पर डाल दिया है। अपने परिवार की छोटी-छोटी ारूरतों की पूर्ति के लिए किस प्रकार एक आदमी पशु ैसी हरकतें करने लगता है, इसका ि त्र सं ाय कुंदन की कहानी 'बाँस की पार्टी' में बखूबी देखा ा सकता है। बा ार ने लोगों की महत्वाकांक्षा को ारम पर पहुँ ा दिया है। लेकिन आपूर्ति के अवसर नदारद है। इस कहानी के नायक और उसके परिवार के हर सदस्य की कामना उसके प्रमोशन पर आकर टिक गयी है। ब ा कहता है पापा का प्रमोशन होगा तो वह साइकिल लेगा। बेटी डांस क्लास वाइन करेगी, पत्नी नया बेडशीट खरीदेगी, पति के लिए दूध लेगी। दफ्तर में अंग्रेज़ी बोलना प्रगति की पह ान है ो उसे नहीं आता इसलिए लोग उसे उल्लू सम ाते हैं। शर्त यह है कि अगर हिंदी बोलनी है तो अंग्रेज़ी के बी ा-बी ा में कहीं-कहीं हिंदी के शब्द डाल दिये गये हैं। यह ऐसी दुनिया है ाहाँ मानवीय संवेदना, व्यक्तित्व बोध और सांस्कृतिक मूल्यों की बात करनेवाला आदमी अवांछित सम ा ाता है। इसलिए कहानी का नायक अपने दफ्तर में हास्यास्पद निरर्थक और फालतू सम ा ाता है। इसलिए प्रमोशन की सू ी में हर बार उसका नाम छूट ाता है। वह योग्य बनने की कोशिश करता है और इसके लिए हँसने की प्रैक्टिस करता है क्योंकि योग्य बनने की पहली शर्त है-"प्रमोशन पाने के लिए हँसना ारूरी है, पार्टियों में हँसना ारूरी है, स्वस्थ रहने के लिए हँसना ारूरी है और इसके लिए किसी व ाह की ारूरत नहीं है, यह विश्राम का नया यथार्थ है। यह नयी पूँ ी की दुनिया है ाहाँ काल सेण्टरों में दस-दस घंटे काम करने वाले लड़के-लड़कियों को इतनी तनख्वाह दी ाती है कि वे ीवित रह सकें, पर हर सप्ताह

पार्टी ारूर होती हैं, ि ासमें वे शराब पीकर ना ाते- ाूमते हैं और अपने भीतर खुश रहने का विश्वास पैदा करते हैं।"[9]

मनो ा रुपड़ा की कहानी 'रद्दोबदल' वर्तमान बा ाार व्यवस्था की कुत्सित रा ानीति को बड़े ही नाटकीय ंग से प्रस्तुत करती है। यह कहानी भी मूलतः नाटकीय शैली में लिखी गयी है। इसके पात्रों में कथाकार धीरेंद्र अस्थाना से लेकर प्रख्यात ि ांतक ए ाा ा अहमद और शोसल वर्कर मेधापाटेकर, अरुंधती राय तक भी शामिल है। कथा को गति प्रदान करने के लिए कहानीकार ने रूपक का प्रयोग किया है। सात सौ रुपये मासिक वेतन पर काम करने वाली लड़की का अपहरण दुकान में बिकने वाला केरी-बेग कर लेता है। इसमें विडंबना यह है कि मनुष्य पर उपभोक्ता वादी संस्कृति एवं वस्तुओं ने प्रभुत्व ामा लिया है। यह बा ाार का विकृत एवं क्रूरतम् रूप है ाो पूँ ाीवाद के ारमोत्कर्ष का सू ाक है। इसके प्रतीक के रूप में 'बिल्ला' है, उसके ऊपर मिसे ा लिबर्टी है ाो पूरी दुनियाँ की लिबर्टी की ोतना को कु ाल देने पर आमदा है। यह साम्रा यवाद का ही विकसित रूप नव्य साम्रा यवाद है, सामंतवाद का उत्तर पूं ाीवाद है, ि ासका सीधा संबंध बाज़ार से ाुड़ता है।

नये साम्रा यवाद का वास्तविक रूप ाो युगोस्लाविया, सूड़ान, अफगानिस्तान और ईरान, ईराक आदि को बेरहमी से कु ाल ाुका है। बा ाार नव्य साम्रा यवाद की अगली पंक्ति की सेना है और इसका वाहक मीडिया और नया सू ाना तंत्र है। 'पीछे मुड़कर देखना मना है, आगे देखना दंडनीय है।' कहानी का यह वाक्य इतिहास, वि ाारधारा और भविष्य दृष्टि को लेकर ारूरी बहस का रास्ता खोल देता है। वि ाार और इतिहास के अंत की उत्तर आधुनिक घोषणाओं पर यह सटीक व्यंग्य है।

'बिल्ला' इतिहासबोध से शून्य है। वह उस बोध को ही मिटा डालने पर आमदा है ि ासकी ाड़ें सांस्कृतिक संर ाना और स्मृतियों में होती है। उसका लक्ष्य आर्थिक और मशीनी मनुष्य की र ाना करना है ाो मानवीय गरिमा, आस्था और ाीवन के प्रति अनुराग से रहित हो, बस बा ाार के लिए ि ाए देखिए-

"तै किया गया है कि हर इंसान अपनी ारूरत से तीन गुना यादा ाीज़ों का इस्तेमाल करे। नई दुनियाँ को ऐसे इंसनों की ारूरत नहीं ाो ाीज़ों के इस्तेमाल में कोताही और कं ाूसी बरते।"[10]

मनो ा रूपड़ा की यह कहानी न केवल बा ाार के अर्थ-तंत्र को विश्लेषित करती है अपितु यह भी बतलाती है कि आ ा का बा ाार मनुष्य की ारूरतों, आवश्यकताओं और इ छाओं का निर्माण बा ाार की अर्थ नीति के अनुरूप करता है। विकल्प विहीन बा ाार व्यवस्था के इस सं ााल में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष मनुष्य फँसता ाा रहा है।

बा ाार को ही केंद्र बनाकर लिखी गयी पंक ा मित्र की कहानी ‘बिलौती महतो की उधार-फिकिर’ का विषय एक होने के बाव ाूद भी वर्णन शैली एवं शैली की बुनावट तथा संवेदनात्मक स्तर पर बिलकुल भिन्न है। पंक ा मित्र बा ाार की तिकड़मों को गाँव और शहर की सूत्रबद्धता में देखने का प्रयास करते हैं। और कथावस्तु का एक ाटिल ताना-बाना बुनते हैं। बिलौती महतो का काइयाँपन, उनके बेटे (बिर ाू) की अवारागर्दी, नये वित्तीय बा ाार की प्रवृत्ति और ग्रामीण ाीवन मूल्यों और मानसिक बुनावट के द्वंद्व को सामने लाती है-"नई मैट्रो संस्कृति गाँवों में प्रवेश कर गयी है और वहाँ भो ान, स्वास्थ्य, पेय ाल तथा शिक्षा ैसी बुनियादी ारूरतों के ऊपर मोबाइल, सी.डी. प्लेयर और ब्लू फिल्में हावी हो गयी हैं। बिर ाू की एक्सीडेंट में मृत्यु और बिलौती की विक्षिप्तता विश्व पूँ ाीवाद के धक्के से ह रही ग्रामीण संर ाना की दारुण नियति को प्रकट करती है।"[11]

गौर करनेवाली बात ाो है वह यह कि किसान की आत्महत्या सामंती शोषण का परिणाम नहीं अपितु नयी पूँ ाीवादी व्यवस्था ि ासे बा ाारवाद के नाम से ााना ााता है का परिणाम है।

किसान वर्ग का शत्रु भारत में नहीं अमेरिका में बैठा है और पूरी दुनिया में उसके दलाल फैले हुए हैं ि ानके बारे में पंक ा मित्र की एक अन्य कहानी ‘बेला का भू’ में लिखा है कि अब वह समय आ गया है ाब दलालों को कमीशन ए ेंट कहा ााने लगा है।

गौरतलब है कि आ ा का गाँव प ास वर्ष पहले का भारतीय गाँव नहीं, वह आबो हवा अब बदल ुकी है। मगर विसंगति यह है कि यह बदलाव विकासात्मक न होकर विनाशात्मक है। आ ा केवल गांव ही शहर की ओर नहीं भाग रहा है। बल्कि शहर और उसका बा ार भी अपने मुनाफे के लिए गांव की ओर तीव्र गति से छलांग लगा रहा है। वैश्विक पूँ ीवाद ने ग्रामीण यथार्थ और शहरी यथार्थ में भेद कर दिया है। दोनों के बी ा विर ू और बिलौती ैसे दम तोड़ते लोग मौ ूद हैं। विदेशी कंपनियों के माया ाल में फंसकर बिलौती महतों की खेती बर्बाद हो ाती है। ामा पूँ ी खत्म हो ाती है और विर ू ामीन के काग ात बैंक में गिरवी रखकर लोन पर मोटर साइकिल खरीद लेता है और लहरा-लहरा कर ालाते हुए एक ट्रक के नी े आकर मारा ाता है। इस कहानी में लेखक ने यह दिखाने की पुर ोर कोशिश की है कि कैसे बा ार अपने लुभावने रूप के कारण अमीर एवं गरीब, शहर एवं गाँव को अपनी ओर आकर्षित करता है फिर ाब लोग उसकी गिरफ्त में आकर अफीम ैसे नशे में सराबोर हो ाते हैं तो वह बड़ी बेरहमी से उनका गला घोंट कर निर्मम हत्या कर देता है।

बा ार संबंधों पर आधृत प्रदीप पंत की कहानी 'वे होंगे कामयाब' अपने शिल्प विन्यास एवं कथावस्तु की ीवंतता के लिए ानी ायेगी। यह कहानी कार्पोरेट कल ार को बड़ी बेबाकी से ित्रित करती है-

"अपनी बात छोडो दादा! अमेरिकियों की सो ो, िन्हें प्रदूषित पर्यावरण में काम करने में असुविधा होती है। इसीलिए वे भारत आकर काम करना पसंद नहीं करते। लेकिन ाब अमेरिका से परमाणु ऊ ाा आने लगेगी तो अमेरिकियों को यहाँ आकर काम करने में कोई परेशानी नहीं होगी।"

'तुम्हारा मतलब है कि अमरीकी यहाँ आकर काम करेंगे?'

'बिल्कुल'

"ब ावा, अमरीकी आएंगे तो अमरीकी कंपनियाँ भी आएंगी। आई तो शायद अभी भी होंगी पर हमारी सम ा से तब शायद अपने देश में अमरीकी कंपनियों की कतार सी लग ायेगी। अधेड़ भिखारी ने उत्साहपूर्वक कहा। और ये कंपनियाँ बड़े-

बड़े कारखाने लगाएगी और हमारा देश ाक ाक अमेरिकी कार्पोरेट कल ार वाला बन ााएगा।"[12]

प्रदीप पंत की यह कहानी ब ़ते बा ाारवाद के व ार्स्व का ि ात्र खीं ाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ती। वह गहरे में पैठकर बा ाारवाद से होनेवाले व्यापक नुकसान को परत-दर-परत खोलने की कोशिश करती है-"तब तो हमें लगता है कि अमरीकी मुनाफे वाले इस कार्पोरेट कल ार से अपने देश में भिखारियों की तादात ब ़ाायेगी ि ास हिंदुस्तानी को देखो सड़क पर कटोरा लिए नज़र आएगा। सम ा लो कि सारा देश भिखारी है।"[13]

कहने की आवश्यकता नहीं कि ब ़ता बा ाारवाद गरीब देशों को उन्नति के पथ पर न ले ााकर पतन के मार्ग पर ले ाा रहा है। बा ाारवाद ने गरीब देशों पर एक क्षत्र साम्रा ाय स्थापित कर उन्हें और गरीब बनाया है। एक समय ऐसा भी आएगा कि वह इन गरीब मुल्कों को अपना गुलाम बनायेगा। बा ाारवाद को लेकर लिखनेवाले अन्य कहानीकारों में उदय प्रकाश, अखिलेश, उमाशंकर ाौधरी, ांदन पांडेय, पंक ा मिश्र आदि का नाम लिया ाा सकता है।

नव्य पूँ ाीवादी भूमंडलीय दौर में सामा ािक संबंधों में अमूल ाूल परिवर्तन देखने को मिलता है। विवाह ाो परिवार ौसी संस्था की नींव है, आ ा संकट में पड़ गयी है। स्त्री-पुरुष संबंध विक्षिन्न होते ाा रहे हैं। इस संबंध में रमेश कुंतल मेघ की निम्न टिप्पणी दर्शनीय है-"सामा ािक स्थितियों में परिवर्तन आने से मूल्यों में परिवर्तन होता रहता है। इसलिए मूल्य शाश्वत नहीं, परिवर्तनशील होते हैं। बदले हुए सामा ािक संबंधों के फलस्वरूप ाब विराट ानता में नये ाीवन-मान और ाीवनादर्शों को स्थापित करने की उद्विग्नता होती है और ाब उन्हीं के प्रतिनिधि-स्वरूप मानवतावादी दार्शनिक, कलाकार, साहित्यकार, धर्मगुरु या अन्वेषक समा ा के उपेक्षित अथवा नये तत्वों की ओर ध्यान देते हैं और मानव समा ा की आवश्यकताओं को सम ाते हैं तो नये मूल्यों की सृष्टि होती है।"[14]

8 वीं शती में भूमंडलीकरण नव्य पूँ ाीवाद का मुखौटा पहनकर बा ाारवाद के माध्यम से समा ा में प्रवेश किया तो बड़ी तेज़ी से सामा ािक एवं मानवीय मूल्यों में

परिवर्तन देखने को मिला। मूल्य परिवर्तन की गति इतनी तेज़ थी कि एक पी ़ी, दूसरी पी ़ी से अपने को अलग मानने लगी। नयी पी ़ी अस्तित्ववादी वि ारधारा से संबंध रखने के कारण बा ारवाद से गलबाही किए प्रतीत होती है। नयी पी ़ी भविष्य के विषय में कम आस्था रखती है वह बा ार के नियम के अनुसार आ यानी वर्तमान में ीना पसंद करती है। आधुनिकता बड़ी तेज़ी से नये मूल्यों को स्थापित करती है। लेकिन भारत के संदर्भ में स्थिति थोड़ा भिन्न है। क्योंकि हमारे यहाँ कई भारत एक साथ ीते हैं। पुरातन, परंपरावादी भारत, आदिवासी समा का भारत, महानगरीय भारत, शायद इसीलिए पारंपरिक और आधुनिक मूल्य गलवाही किए दिखते हैं। गाँवों, कस्बों और नगरों में ही नहीं महानगरों का भी पिछड़ा समा विवाह, प्रेम, नैतिकता, स्त्री-पुरुष संबंधों के संबंध में पुराने मूल्यों को लेकर ीता है। तो वही आधुनिक नगरीय वर्ग के उ   लोग नये मूल्यों को लेकर।

"मूल्य परिवर्तनों के मूल में सामा िक आर्थिक कारणों की भूमिका बहुत बड़ी है। व्यक्ति की इसी अर्थोन्मुखी दृष्टि का परिणाम हुआ-संयुक्त परिवारों का विघटन, आत्मीय रिश्तों में बनावटीपन, माँ बाप, भाई-बहन, ा ा-ताऊ, बुआ ैसे रिश्तों को ोये ाने का दिखावा, संबंधों का सतहीपन, स्त्री-पुरुष संबंधों की नयी व्याख्या, अनाम संबंधों, यौन शु िता को तिलां लि आदि।"[15]

सुभाष शर्मा की कहानी ‘कुहुकि कुहुकि िया ाय’ में मुंबई ैसे महानगर में बीयर बार में डांस करने वाली मितरा और विमला ैसी तमाम नारियों की कथा है िन्हें व्यक्ति स्त्री नहीं उपभोग की वस्तु सम ाता है-"उस दिन की ठेस तो मैं, ाब्त कर गई थी, ाब मु ासे घृणा की थी। लेकिन आ की प्रीति मु ासे सही नहीं ाा रही है। मैं िास अंधे कुएँ से निकल नहीं पा रही थी, उसी में कूदने को मेरी छोटी बहन उतावली थी। उसे मेरे नरक में अपने घर के नरक से यादा आज़ादी की आशा दिख रही थी। हम इंसान बनना ााहते हैं, इंसान िसके पास दो हाथ दो पांव, दो आँखें, नाक, कान, दिल-दिमाग सब कुछ हो मगर ामाना पग-पग पर हर तरह से हमें सिर्फ योनि बनाए रहने देने पर आमदा है।"[16]

समकालीन कहानीकारों की कहानियों में युग-युग से पुरुष प्रधान समा ा के स्त्री-पुरुष के लिए निश्ि ात पृथक-पृथक मूल्यों को खुलकर ाुनौती मिली है। पुरुष के एकाधिकार पर नारी ने खुलकर प्रश्नि ान्ह लगाए हैं। इस काल की कहानी बदली हुई ाीवन परिस्थितियों का विश्स्त प्रमाण और अपने समय की साक्षी है। इस दौर की कहानियों में बा ाार, पूँ ाीवाद, नव्यसाम्रा ायवाद के अतिरिक्त ाि ान विषयों को प्रमुखता से उठाया गया है उसमें मुख्य रूप से स्त्री-पुरुष संबंधों में मूल्यों की तलाश धर्म, समा ा, परंपरा और नीति ग्रंथों के आधार पर न होकर ाीवन के नाना स्थितियों के बी ा से की गई है। वह पूरी तरह से अपने समय संदर्भों से ाुड़ी है। व्यक्तित्व की स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा के कारण नर-नारी संबंधों और प्रेम, विवाह, आदि पर पुनर्वि ाार हुआ और नये मूल्य विकसित हुए।

इस दौर की कहानी में स्त्री-पुरुष संबंधों के विविध स्तरों का अत्यन्त सूक्ष्मता से ाित्रण हुआ है। संबंधों के सूक्ष्म स्तरों, अनाम भावनाओं और अनछुए प्रसंगों को ाि ास रूप में वाणी मिली है वह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। इस दौर की कहानियाँ परंपरागत स्त्री-पुरुष संबंधों को नकारती है। महानगरीय ाि ांतन में पुरुष के एकाधिक स्त्रियों से प्रेम की प्रतिक्रिया में ान्मा अनेक पुरुषों से प्रेम का भाव निरुपमा सेवती की कहानी ‘सब में से एक’ में स्पष्ट देखा ाा सकता है-"भरपूर संतुष्ट सी हो आयी कि मेरे तमाम वाक्य मु ो नितांत मुक्त लड़की होने का ाामा पहना गये हैं।"[17]

यह कहानी स्त्री-पुरुष दोनों में आए परिवर्तन को बखूबी व्यक्त करती है। आ ा के दौर में स्त्री और पुरुष दोनों वस्तु के रूप में तब्दील हो ाुके हैं।

एक बार यू ा करने के बाद किसी दूसरे वस्तु की तलाश स्त्री एवं पुरुष दोनों को बे ाैन कर देती है-"रो ा रो ा प्रेमिकाएँ बदलने वाले पत्नियों को भ्रम में रखनेवाले और बिस्तर की संगिनियाँ खरीदने वाले, हर ाीज़ में धांधली कर, दूसरे को कु ालकर खुद बड़े बन ााने वाले ये लोग आखिर लड़की की शीलमयता या शीलभंगता के प्रति इतने भावुक क्यों हो ााते हैं। अपसंस्कृति में ाीकर लड़कियों को संस्कृति की सूली पर ा ़ाने की ईमानदारी कहाँ से आ ााती है इनमें।"[18]

भीड़-भाड़ भरी ि ंदगी मशीन की तरह तेज़ी से भाग रही है। ऐसी स्थिति में स्त्री-पुरुष की हालात वयाँ करती अल्पना मिश्र की कहानी 'मुक्ति प्रसंग' एक नवीन कलेवर लिए हुए है। यह कहानी दौड़म-दौड़ ि ंदगी के बी ा यांत्रिक बनती ीवन स्थितियों की विडंबना और विसंगतियों को ि ात्रित करती है। इस यांत्रिकता ने समू ो दुनियावी-कार्य-व्यापारों को तमाशे में तब्दील कर दिया है। एक महाविद्यालय में ालने वाले वायवा की महीन डिटेल्स-इस यंत्रणा को बखूबी व्यक्त करता है-"मेरे दोनों बेटे घर पर अकेले हैं। छोटावाला डे ़ साल का है। पता नहीं क्या तूफान म ाा होगा वहाँ? भूखे भी होंगे सुबह से।"[19] वास्तव में वायवा कक्ष के बाहर का ो यथार्थ है, ि ासमें लड़कियाँ रो रहीं हैं-वह हमारी समा ा व्यवस्था का नियमन करनेवाले पुरुष-सत्तात्मक प्रभुत्व की देन है। यह यथार्थ सभी स्त्रियों पर एक सा गु ारता बरसता है- ाहे वह बायवा देनेवाली छात्राएँ हों या फिर वायवा लेनेवाली प्राद्यापिकाएँ। इसलिए वा िका को लगता है-" ैसे सारा बे ंगापन मेरे ही भीतर हो। मु ामें से निकलता हुआ, मु ामें से निकल कर फैलता हुआ, उस तक, उस तक और सब तक, मेरे हिस्से का खून पानी, उल्टी...।"[20]

यहाँ वायवा एक व्यवस्था का प्रतीक है ाहाँ शक्तिशाली पुरुष की सामंती मानसिकता दृष्टिगो ार होती है। इग ाामिनर महोदय का आदर्श कथन-"कल को नौकरी का इंटरव्यू देने ााएंगी, तो इंत ाार नहीं करेंगी ये लोग? या फिर औरत होने का ना ााय ा फायदा लेती हैं ये लोग। हाँ नहीं तो। तमाशा बना रखा है। .... औरतों ने ीना मोहाल कर रखा है।"[21]

नारी विद्रोह इक्कीसवीं शती की कहानी की सबसे बड़ी उपलब्धि है। वैश्विक स्तर पर पुरुष सत्तात्मक समा ा में नारी विद्रोह के मूल में नारी दमन, नारी की शारीरिक संर ाना और आर्थिक परालंबन आते हैं। नारी विद्रोह के इन्हीं तत्वों ने उसे आत्मनिर्भर बना रू ़ियों, अत्या ाारों के विरुद्ध अकेली खड़ी होने और समा ा से लड़ने की शक्ति एवं साहस दिया है। अब वह परंपरागत नारी की तरह किसी अत्या ाार को सहने को विवश नहीं। शशिप्रभा शास्त्री की कहानी 'धर्म रक्षा' में आत्मनिर्भर पल्लवी बत्तीस वर्ष तक पति के बुरी आदतों को सहन करती है। पर

अंत में पति से अलग होने का निर्णय करती हुई वह कहती है-"मु ो घिन आती है तुम्हारे पूरे व ूद से मैं तुमसे छुटकारा पाना ाहती हूँ। उस विदेशी महिला ने पति के खर्राटे से तंग आकर तलाक की अ ीं दी थी, तुम्हारे इस तरह से शेव बनाने के कारण ही मैं तुमसे फारखती लेना ाहती हूँ।"[22]

आ ा की स्त्री पुरुष द्वारा किए ा रहे अत्या ार का खुलकर विरोध करती है। लवलीन की कहानी 'बैल बनी औरत' में नारी पुरुष सत्तात्मक समा ा को ुनौती देती है। मरमू की ाति में नारी के हल लाने को ाति के लिए अपशगुन माना ाता है। परंतु मरमू अपने पति (कुरम) के निठल्ले और शराबी होने के कारण, किसी के आगे ुकने के ब ाय स्वयं हल लाकर पुरुषीय एकाधिकार को ुनौती देती है। विरोध में उसकी पिटाई भी की ाती है-"सभी भयभीत और हतप्रभ थे। आ ा तक किसी बेंथर ने मार में हल लाकर पुरुष की सत्ता को ुनौती नहीं दी थी। आसमान फट गया है या धरती डोल रही है ो आ ा यह दिन देखना पड़ रहा है।"[23]

पूँ ीवादी दौर में नारी शिक्षा प्राप्त कर आत्मनिर्भर हो रही हैं। इस कारण न केवल समा ा द्वारा बनाए गए रू ़ि बद्ध प्रतिमानों के विरुद्ध वे आवा ा उठाती हैं बल्कि समा ा की दोहरी नैतिकता पर ोट करती है। कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी 'गलियारे' की नारी कहती है-"पति का अहम् ठहरा... वह नहीं ाहेगा कि उसकी पत्नी किसी अन्य पुरुष के विषय में सो े भी, बकि पति कितनी बार प्यार करके अछूता और व्याहा का अनव्याहा ही बना रह ाता है।"[24]

इसी प्रकार सुनीता ैन की 'किधर' मणिका मोहिनी की 'एक ही बिस्तर पर', 'दुश्मन', 'पूरक' आदि कहानियाँ दाम्पत्य ीवन में आए तनाव, बदलाव एवं दूरियों को व्यक्त करती हैं। 'पीली लड़की' में मणिका मोहनी कहती है-"औरतें पति को अंगूठी और ब्लाउ ा के साथ-साथ नि ी पूँ ी ही सम ाती है। और अक्सर सो ाती है कि दुनियाँ भर की लड़कियाँ उनके पति पर डाका डालनेवाली हैं।"[25]

भूमंडलीय दौर के कथाकारों ने समय और समा ा में आ रहे परिवर्तनों को देखते हुए विवाह संस्था को निरर्थक घोषित किया है। इतना ही नहीं विवाह को नारी का शोषण माना है। इस वि ारधारा को लेकर सुरेंद्र ौपड़ा, गदीश ातुर्वेदी,

रमेश बक्षी, ममता कालिया, मन्नू भंडारी ने अनेक कहानियाँ लिखी हैं। रमेश बक्षी की कहानी 'पिता दर पिता' में फादर (पादरी) कहता है-" ाो शादी करते हैं अपने आप के साथ म ााक करते हैं। .... एक अन्य स्थान पर एनी कहती है 'विवाह माने खुद को समाप्त करना है।'"[26] गंगा प्रसाद विमल की कहानी 'सिद्धार्थ का लौटना' में सिद्धार्थ का नब्बे साल की औरत से बात करना भी पत्नी को गवारा नहीं। दूधनाथ की 'दिन ार्या' में पति-पत्नी का बाना इस प्रकार है-"हाँ, हाँ, तुम्हें तो दूसरों की सारी बीवियाँ अ छी लगती हैं, सिर्फ मैं नहीं।"[27] इस कहानी में दांपत्य का मूल्य एक रुटीन से अधिक नहीं दिखाया गया है। पति 'पत्नी' को कमोडिटी सम ाता है। और पत्नी दांपत्य को दिन ार्या की तरह ाीती है।

अस्सी-नब्बे के दशक की कहानियों का मुख्य कथ्य टूटे हुए दांपत्य संबंधों का ाित्रण, तलाक और तलाक के बाद की मूल्यहीनता की मनःस्थिति और आत्मसंघर्ष की पीड़ा है। मन्नू भंडारी की 'बंद दरवा ाों का साथ' में यह पीड़ा बोध भरे-पूरे पन के साथ व्यक्त हुई है। आ ा की कहानियों में मूल्यों की रक्षा नहीं बल्कि नवीन मूल्यों के स्वीकारने और तलाशने का भाव यादा गहराई से देखा ाा सकता है। इस दौर की कहानियों में स्त्री-पुरुष संबंधों के कई ऐसे ाित्र देखने को मिलते हैं ाािन्हें किसी सामाािक संबंधों की परिभाषा में नहीं रखा ाा सकता है। महीप सिंह की कहानी 'कितने संबंध' ओ ़ाी हुई नैतिकता को बड़े ाोरदार ंग से बेपर्द करती है। इसी प्रकार ममता कालिया की कहानी 'एक अदद औरत' की कथा केवल महानगरीय ाीवन स्थिति को व्यक्त करती है, ाहाँ विवाह ाैसी संस्था को ठोकर मार 'लिविंग टुगेदर' के पाठ को स्थापित किया गया है।

महिला कथाकारों ने सेक्स को दैहिक आवश्यकता के रूप में ाित्रित किया है। इससे स्त्री-पुरुष संबंधों को देखने का एक नया कोण भी विकसित हुआ है। मन्नू भंडारी की 'तीन निगाहों की एक तस्वीर', 'बाहों का घेरा' सेक्स समस्या पर लिखी गई कहानियाँ हैं। एक स्त्री और पुरुष शरीर सुख पाने के लिए ाो भी यत्न करते हैं उसे इस कहानी में गर्हित रूप में नहीं देखा गया है। मणिका मोहनी की 'अनलकी नंबर' की दफ्तर में काम करनेवाली लड़की अपने प्रेमी से कहती है-"आपकी सू ाना

के लिए मैं आपको बता दूँ कि आपके लिए मैं पहली या दूसरी लड़की हो सकती हूँ पर आप मेरे लिए तेरहवें लड़के हैं।"[28]

स्त्री-पुरुष संबंधों को लेकर लिखी गई अन्य कहानियों में दूधनाथ सिंह की 'उसका बिस्तर', महेंद्र भल्ला की 'एक पति के नोट्स', ममता कालिया की 'एक पत्नी के नोट्स', कृष्णा सोबती की 'मित्रो मर ानी', निर्मल वर्मा की 'धागे', उषा प्रियंवद का 'सागर प्यार का संगीत' आदि कहानियाँ सेक्स संबंधों पर लिखी गई हैं। ागदीश ातुर्वेदी के 'निहंग और अंधेरे का आदमी' संग्रह का कथ्य ही यौन स्वतंत्रता और स्व छंदता है।

अतः स्पष्ट है कि इस दौर की कहानियाँ भूमंडलीय व स्वि को बखूबी व्यक्त करती है। इन कहानियों में स्त्री पुरुष संबंधों के बदलते मूल्यों और उनके संबंधों की नयी व्याख्या की गयी है। यह दौर पूर्णतः सांस्कृतिक संक्रमण का दौर है। इसमें संदेह नहीं कि स्त्री-पुरुष संबंधों और मूल्यों को नयी दिशा देने में इस दौर के कहानीकारों ने बड़ी प्रशंसनीय भूमिका अदा की है। संबंधों के विविध आयाम न सिर्फ ित्रित हुए बल्कि उनमें नये अर्थ, संदर्भ और व्याख्या देने की पुर ोर कोशिश भी की गयी है, ो अत्यन्त सराहनीय है।

भूमंडलीकरण के दौर में ाब संसार एक विश्व ग्राम में तब्दील हो ुका है, तब पुरातन समा ा हासिए पर छूट ााता है। इसने न केवल समा ा के मूल ाँ ो को तोड़ा है बल्कि व्यक्ति को इतना अधिक स्वार्थी बना दिया है कि वह नि ाता के अतिरिक्त समा ा के विषय में सो ाता भी नहीं। फिर भी निहायत पिछड़े इलाकों में आ ा भी सामाा िक ाीवन बिखरा ही सही पर ब ाा ारूर है। दैनंदिनी ाीवन व्यवहार को लेकर अनेक कहानीकारों ने कहानियाँ र ाी हैं। ऐसे कहानीकार के रूप में हरि भटनागर का नाम लेना अपेक्षित ाान पड़ता है। वे रो ामर्रा की छोटी-छोटी घटनाओं को अपनी कहानी का आधार बनाते हैं। उनकी कहानियाँ हमारे आसपास के समा ा के मेहनतकश और निम्न मध्यवर्गीय लोगों का ाीवन ित्र हमारे सामने खीं ाती है। 'बिल्ली नहीं दीवार' संग्रह की 'हुलिया' कहानी का नारू मोटर गैरे ा में काम करनेवाला 13 वर्षीय लड़का है। एक दिन वह नाई के शीशे में अपना हुलिया

देखता है-"आँखें अंदर को धँसी थीं। मुँह पर सफेदी और ुर्रियाँ थीं। बाल बिखरे हुए लटों की शक्ल में निहायत गंदे थे। हाथ-पैरों और गले-गर्दन और छाती के इर्द-गिर्द मैल की काली परत दिखती थी िसे नाखून से आसानी से खुर ा ा सकता था। बनियान तेल, मोबीलॉयल सनी, पानी से तर थी।"[29]

प्रश्न उठता है कि 13 साल का नारू ाो दिन भर बड़ी-बड़ी गाड़ियाँ धोता-ामकाता है और खुद मैल-तेल से सना रहता है, िसकी माँ कूडा बीनती है, ाो म छरों से भरी नाली के किनारे एक अंधेरे से टपरे में रहता है िसके पास नहाने के लिए साबुन का छोटा सा टुकड़ा है। उसका हुलिया क्या बदल गया है। कल से उसको ाीवन के उसी र्रे पर पुनः ालना है। वह आ ा बदले हुए परिदृश्य में भी बदतर ाीवन ाीने को अभिशप्त है। हरि भटनागर की एक अन्य कहानी 'नशा हिरन' बर्तन साफ करनेवाली गरीब एवं निर्धन बाई की मार्मिक अभिव्यक्ति है ाो अभाव ग्रस्त ाीवन ाीते हुए भी अपने सम्मान को ब ाने का भरसक प्रयास करती है। पर पति की बिमारी के ालते वह अपने सम्मान को दाँव पर लगाने को म ाबूर होती है। हरि भटनागर शब्दों के माध्यम से घर, आंगन, गली मुहल्ले का ित्र खीं ाने में तो माहिर हैं ही, मानवीय भावनाओं और परिस्थिति ान्य मानसिकता का सूक्ष्म ित्र खी ंने में भी कुशल मनोविज्ञानी हैं। यह विशेषता उनकी कहानी 'बदबू' में देखी ाा सकती है-"उस कोठरिया में मां अपनी दुनियाँ बसाये है, और उसी में मग्न है। एक खाट ाो गड़हे की शक्ल ले ाुकी है, दो टीन के टूटे-पि ाके बक्से हैं, ाो ईंटों के ऊपर रखे हैं, िान पर माँ की पुरानी धूल खाई घिसी धोतियाँ पड़ी हैं। ाारों तरफ भगवान के कैलेंडर ग ो हैं, ाो धूल और धुएँ को गले लगाए हैं, िान्हें दिवाल अपने से दूर करना ााह रही है। सिर के ऊपर एक गांठदार डोरी है, िास पर गूदड़ होते र ााई कंबल और कपड़े ाूल रहे हैं।"[30]

मं ाूर एहतेशाम की कहानियों में लेखक का अपना गाँव वहाँ के परिवेश का रूप रंग देखने को मिलता है। 'रिश्ता' कहानी में एक पात्र कहता है-मैं एक साधारण लेखक हूँ पिछले काफी समय से अपने और देश से अपने संबंध को लेकर कुछ असाधारण सा लिख डालने के ाुनून में मुब्तिला, एक किताब अपने बु ाुर्गों को

उनकी ाड़ों को खोखला वहाँ तक ाहाँ आ ा हम हैं, लिखना मैंने अपना मकसद बना रखा है। साबित मैं यही करना ाहूँगा कि इस मुल्क में बसने वाले मुसलमान कहीं बाहर से नहीं आए। एक नया धर्म उन्होंने कबूल किया तो उससे उनकी ाड़ें नहीं बदल गयीं।

आ ा भी उतने ही भारतीय हैं ि ातने सैकड़ों साल पहले उनके पूर्व ा थे। तलाश करें तो आसानी से हम उस सतह तक पहुँ ा सकते हैं, ाहाँ उनका आपसी खून का रिश्ता साबित होता है। इस मकसद को शब्द भाषा में पकड़ पाना, ारित्रों और वातावरण में अदा करना, यकीन ाानिए, आसान काम नहीं।

पिछले एक दशक के यथार्थ का मुख्य फलक संप्रदायवाद, फांसीवाद, विश्व पूं ाीवाद के क्षेत्र में नयी ाुनौतियाँ पैदा हुई हैं। हिंदी कहानी इन ाुनौतियों को स्वीकार करती है। और इनके विभिन्न पहलुओं से खुलकर टकराती है। सांप्रदायिकता निःसंदेह अक्सर मात्र दो संप्रदायों के बी ा के संबंधों, उनसे ाुड़ी भावुकता और सहानुभूति का विषय बनी रही है। इसके पीछे काम कर रही आर्थिक अंतःक्रियाएँ, इनकी आर्थिक व्याप्ति, दोनों संप्रदायों के बी ा कायम आर्थिक संबंधों की पड़ताल विभिन्न कहानियों में की गयी है। रा ोंद्र लहरिया की 'युद्धकाल' अवधेश की ' ूह', रमेश उपाध्याय की 'रात अब भी उतनी काली है', असगर व ाहत की 'अयोध्या कहाँ है रे?' 'और अंत में प्रार्थना' (उदय प्रकाश) आदि। इसके अतिरिक्त भीष्म साहनी की ' ाुटपुटा' तथा मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक' की ा ार्ा अपेक्षित ाान पड़ता है। इन कहानियों में सांप्रदायिकता को एक सामा ाक परिघटना के रूप में देखा गया है। आ ाादी के बाद के 35-40 सालों के दौरान हमारी सामूहिक अस्मिता में कैसी दरारें पड़ गयी हैं, मध्यवर्ग के एक बड़े हिस्से की व्यापक मानवीय सहानुभूतियाँ कैसे सिकुड़ती ाली गयी हैं, किस प्रकार वे सांप्रदायिक हिंसा का विरोध करने के ब ााय समर्थन कर रहे हैं, को इन कहानीकारों ने बखूबी ि ात्रित किया है। मं ाूर एहतेशाम की कहानी 'कौम' में सांप्रदायिकता के स्वरूप को देखा ाा सकता है, ाहाँ वे एक पात्र से कहलवाते हैं "आखिर कब तक ाीज़ों को सं ाीदगी से सम ो बगैर हम सिर्फ रिएक्ट करते रहेंगे? तुम्हें नहीं लेना

कुछ अपने पुरखों की शानदार तारीख से, ि ासमें उन्होंने हिंदुस्तान पर सदियों हुकूमत की, न उस अलहदगी के ाब े से ि ासने मुल्क का बँटवारा कराया। मु े अपनी ि ांदगी यहाँ और इन लोगों के बी ा बितानी है, ाो मु ा तमाम फर्क के ि ं ोरे पीटे ााने के बाद भी एक से लगते हैं। कब हम मानेंगे कि यह फर्क की पब्लिसिटी कुछ लोगों की रो ाी-रोटी और व ाूद बनाये रखने का तरीका है, और इससे नुकसान वे उठा रहे हैं, ि ानके किये से लोग आपस में करीब आ सकते हैं।"[31]

स्वयं प्रकाश की 'पार्टीशन', रमेश उपाध्याय की 'हँसो हिमा हँसो', शंकर की ' ागो, देवता ागो' में यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि आम ान कैसे संकीर्ण धर्मांधता के वशीभूत होकर धार्मिक उन्माद फैलाते हैं। इसमें यह भी दिखया गया है कि हिंदुत्ववादी सामा ािक, सांस्कृतिक निर्मिति वास्तव में उस पारंपरिक धार्मिक सामूहिकता का हिस्सा कभी नहीं रही, ि ासके अंतर्गत आम ानता कर्मकांड, दान-पुण्य, पू ाा-आराधना ौसे रस्मों-रिवा ा को विकसित किया।

भारतीय समा ा को दो समुदायों 'हिंदू और मुसलमान' के रूप में देखने की अति प्रा ाीन परंपरा रही है आ ा के पूँ ाीवादी युग में किसी भी हमले के लिए मुसलमान ि ाम्मेदार माना ााता है। ऐसा ही कुछ वयां करती उमाशंकर ाौधरी की कहानी 'स्वीट होम' का यह उद्धरणः"आप भोले हैं, आपको नहीं मालूम साले मुसलमान आई.एस.आई.ए ोंट होते हैं। सबका संबंध पाकिस्तान से है। आपको क्या लगता है कि दिल्ली ौसे महानगर में इतना बड़ा मकान होना एक नौकरी से संभव है, और उस पर ये ऐशो आराम ए.सी. और गाड़ी, साली पता नहीं कहाँ-कहाँ मुँह मारती होगी। इसके ाक्कर में एक दिन मैं भी आतंकवादी ठहरा दिया ााऊँगा।"[32] शशिभूषण की कहानी 'स ाा' सांप्रदायिकता को एक नए पाठ में र ाती है। कहानी की पात्र शहीदा मुस्लिम होने के कारण स्कूल से निकाल दी ााती है। "शहर ठंडा हो गया। शहीदा आपा को काले ा से निकाल दिया गया। आपा सो ाती है, आखिर उनकी खता क्या थी-कुँवारी होना या मुश्किल होना? नहीं-हैव नाट् यू सेक्स लास्ट नाइट? हथौड़े की तरह ये शब्द उसके ोहन में गूँ े और वो ि ांदगी में पहली बार नमा ा प ़ने बैठ गयी।"[33]

अखिलेश की कहानी ‘अंधेरा’ वर्तमान की भयानक स्थिति को मूर्त करती है। हिंदू दंगाइयों के बी ा फँसी रेहाना अपने को हिंदू साबित करने के लिए इतनी निपुणता से दंगाई साधू के हिंदू धर्म से संबंधित सवालों का ावाब देती है कि साधू एकदम संतुष्ट हो ाता है-"यह है असल हिंदुत्व का संस्कार, योति ी को देखिए, सलवार-कुर्ता पहनती है। पैंट, ीन्स, टाप्स ैसी सेक्सी और पश्िामी पोशाकें पहननेवाली छिनारों को सीखना ाहिए इनसे। यदि वे नहीं सीखेंगी तो हम सिखायेंगे।"[34]

रेहाना के ावाबों से उसका प्रेमी ‘प्रेमरं ान’ भी इस धोखे में रहता है कि रेहाना हिंदू धर्म इसलिए सीखी है कि विवाह के बाद ससुराल वालों को खुश रख सके परंतु रेहाना उसके अनुमान को गलत साबित करते हुए कहती है-"तुमसे मिलने के पहले ही मैं हिंदू धर्म के बारे में थोड़ा-थोड़ा ानने लगी थी... अब बेहतर ानकार हो गयी हूँ...। मैं ही नहीं, कई मुसलमान हिंदुओं के बारे में ान रहे हैं। मुंबई के दंगों में मुसलमानों के कत्ल के बाद वहाँ के कई मुसलमान अपने मुसलमान होने की आइडेंटिटी छिपाने के लिए तुम्हारे म ाहब की बातें सीखने लगे थे... पर गु ारात दंगों के बाद मुल्क भर के मुसलमान बे ैन हुए...। तुम्हें हैरानी होगी लेकिन ये स ा है-रामायण, महाभारत की कथाओं की किताबें मेरे अब्बू ने मु ो प.ने के लिए दी। कहा था उस वक्त उन्होंने ‘बेटी, प.़लो, बुरे वक्त में काम आ सकती है।’ और देखा तुमने प्रेमरं ान वह प.ना... बुरे वक्त में काम आया।...। रेहाना सिसकने लगी।"[35]

इस प्रकार आ ा के युवा कहानीकार भूमंडलीय दौर में ाब सांप्रदायिकता अपने ारम पर पहुँ ाी दिख रही है। परिणामस्वरूप नक्सलवादी आंदोलन, आतंकवाद, संप्रदायवाद आदि की प्रवृत्तियाँ ते ाी से विकसित हुई हैं, को बड़ी ही सं ाीदगी से अपनी र ानात्मकता द्वारा उसके विविध स्वरूपों को न केवल सामने ला रहे हैं, बल्कि इन समस्याओं से लड़ने के लिए अपेक्षित शक्ति एवं साधन भी तलाश रहे हैं।

दलित ीवन पर पड़नेवाले भूमंडलीय प्रभाव को आ ा के कहानीकार बड़े ही िंदादिली एवं यथार्थपरक ंग से अपने लेखन में ित्रित कर रहे हैं। नव्य साम्रा यवादी युग पूर्णतः पूँ ी और बा ार का युग है िसमें धनी व्यक्ति और अधिक धनी तथा निर्धन एवं गरीब की स्थिति दिनोंदिन और बदतर होती ा रही है। दलितों का ीवन किस कदर भूमंडलीकरण से प्रभावित हुआ है, कहने की आवश्यकता नहीं। दिन भर काम करने के बाद भी उन्हें शाम को भरपेट भो ान नसीब नहीं हो रहा है। इसका सबसे बड़ा कारण आय में वृद्धि न होना, शिक्षा का अभाव, बा ार के दबाव वश आवश्यकताओं में निरंतर वृद्धि प्रमुख है। हालांकि दलित लेखकों में मोहन नैमिशराय, रमणिका गुप्ता, शरण कुमार लिंबाले, ओम प्रकाश वाल्मीकि आदि मुख्य हस्ताक्षरों ने दलित ीवन को मीन से ोड़कर देखने का कार्य किया है। पर समकालीन कहानीकारों ने भी इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

रा ा वाल्मीकि की कहानी 'मैला-मुक्ति' दलितों में दलित कहे ानेवाले भंगी समुदाय की परिवर्तन गाथा है। कहानी की पात्रा ंद्रवती कल तक मैला ोने का काम करती थी, रा ाकुमार और सीमा की प्रेरणा से उसने यह काम छोड़ दिया। अब उसको एक वैकल्पिक रो ागार मिला है। पुनर्वास की व्यवस्था किये बगैर मैला कर्मियों की मुक्ति नहीं हो सकती है। रूखी सूखी खायेंगे पर मैला नहीं उठायेंगे, ैसे नारे न केवल उनकी स्थिति का ित्रण करते हैं, अपितु उस ऊब, घूटन से निकल पाने की बे ैनी और छटपटाहट का भी ित्र खीं ाते हैं। रा ा वाल्मीकि की तरह ही अनीता भारती भी एक सामा िक कार्यकर्ता है। ब्राह्मणवादी समा ा व्यवस्था के खिलाफ लोगों को खड़ा करना और दलित एवं पिछड़ों का उत्थान उनकी कहानियों का मूल विषय है। भूमंडलीय दौर में पेशा को लेकर उन्हें अभी भी हेय दृष्टि से देखा ाता है। 'एक थी कोटे वाली' कहानी में आपने स्कूल शिक्षिकाओं के बी ा पसरी ातिगत संकीर्णता को बड़े ही सह ा ंग से ित्रित किया है।

रा ातरानी 'मीनू' भी एक स ाग कहानीकार हैं, उनकी कहानी 'वे दिन' (अपेक्षा, अप्रैल 2007) में औप ारिक शिक्षा के लिए संघर्षरत एक दलित स्त्री अं ू

की कारुणिक दास्तान है। मुसाफिर बैठा की कहानी 'दरोगवा' (अप्रैल 2007) के विषय में ब ारंग बिहारी लिखते हैं कि "'दरोगवा' उत्तरी बिहार के सीताम .ी ि ाले के अति पिछड़े गाँव से शुरू होकर पॉलिटेक्निक कॉले ा तक फैले सवर्ण व र्स्ववाद का ााय ाा लेती है और उस व र्स्व का मुकाबला करने की दलित आकांक्षा का भी रूपायन करती है। इस कहानी में सवर्णों में भूमिहार, रा ापूत, ब्राह्मण तथा लाला (भूराबाल) से कहीं यादा दबंग यादव/ग्वाले हैं। मुसहरों, डोमों को ग्वालों का अत्या ाार ोलना पड़ता है।"[36]

नये कहानीकारों में टेक ांद दलित ाीवन के विभिन्न प्रसंगों को एक नया कलेवर प्रदान करते हैं। वे अपनी विडंबना बोध तथा भाषिक दक्षता एवं मुहावरों के सटीक प्रयोग द्वारा पाठकों, समीक्षकों आदि का ध्यानाकर्षित करते हैं। हंस के सितंबर 2007 अंक में छपी उनकी कहानी 'अंबेडकर ायंती' के विषय में ब ारंग बिहारी लिखते हैं कि "अंबेडकर ायंती कहानी अपने विडंबना बोध के कारण यादगार बन गयी है। कहानी िास कंट्रास्ट में र ाी गयी है, उसके एक छोर पर रामरतन ौसे इमानदार समर्पित दलित कार्यकर्ता है तो दूसरी छोर पर मास्टर बलबीर, ए.सी.पी. ाय ांद्र, प्रोफेसर सुमन अवसरवादी संपन्न दलित है। समारोहों में इन्हें सुनने आयी दलित युवकों की टोली ाो टिप्पणी करती है, उससे हम इन मौका परस्तों के ारित्र से अवगत होते ही है, साथ ही साथ नयी पी .ी के गुस्से से भी परिि ात होते हैं। यह गुस्सा अगर सही दिशा में मोड़ा ाा सके तो सार्थक बदलाव की उम्मीद की ाा सकती है।"[37]

अतः कहा ाा सकता है कि सदियों से समा ा के हाशिए पर रहे दलित एवं आदिवासी ाीवन को भूमंडलीय दौर के कहानीकार केंद्र में लाने का स्तुत प्रयास करते दिखाई देते हैं। आा ा दलित लेखन ाितनी तीव्र गति से आगे ब .ा है वह उसकी अर्थवत्ता को पुष्ट करता है।

निष्कर्षतः कहा ाा सकता है कि आा ा के कहानीकार भूमंडलीय दबाव को गहराई से पकड़ते हैं, समा ा में घटित हो रहे यथार्थ को बिना किसी लाग-लपेट के िात्रित करते हैं। आा ा के कहानीकारों में विषय की विविधता देखी ाा सकती है ाो

समय एवं समा ा को संपूर्णता में देखने-सम ाने के लिए अति आवश्यक है। उदय प्रकाश, कैलास बनवासी, अखिलेश, ांदन पांडेय यदि बा ाार के खतरनाक स्वरूप को सामने ला रहे हैं तो मनो ा रुपडा, वंदना राग, मिनाक्षी सिंह सरीखे कहानीकार स्त्री विमर्श को नया स्वर प्रदान कर रहे हैं। दूधनाथ सिंह, ममता कालिया, मन्नू भंडारी, महेंद्र भल्ला, निर्मल वर्मा ने स्त्री-पुरुष संबंधों को लेकर अनेक कहानियाँ लिखी हैं। भूमंडलीय दौर में ब ़ रहे संप्रदायवाद को मं ूर एहतेशम, रा ोंद्र लहरिया, रमेश उपाध्याय, उदय प्रकाश, शैवाल सरीखे कहानीकारों ने बखूबी ि ात्रित करने का प्रयास किया है। दलित ीवन को लेकर तो हिंदी कहानी में आ ा एक आंदोलन ही खड़ा हो गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि आ ा के कहानीकार समा ा पर पड़नेवाले नव्य पूं ाीवादी व्यवस्था के प्रभाव को विभिन्न कोणों से देखने का सफल एवं सार्थक प्रयास कर रहे हैं।

* * *

संदर्भ

[1] मधुरेश, हिंदी कहानी का विकास-पृ.181
[2] डॉ.नगेंद्र (संपादक), हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ.हरदयाल (सहसंपादक)-पृ.757
[3] ओम प्रकाश ग्रेवाल, हिंदी कहानी का मौ ूदा पड़ाव, कथन ानवरी मा ि 2001-पृ.51
[4] ओम प्रकाश ग्रेवाल, हिंदी कहानी मौ ूदा पड़ाव, कथन- ानवरी मा ि 2001-पृ.52
[5] हंस, अगस्त, 2006-पृ.69
[6] हंस, अगस्त, 2006-पृ.71
[7] संबोधन, अप्रैल- ून 2007-पृ.39-40
[8] नया ज्ञानोदय, ून 2008-पृ.23
[9] प्रगतिशील वसुधा-79-पृ.177
[10] प्रगतिशील वसुधा 79-पृ.178
[11] प्रगतिशील वसुधा 79-पृ.178
[12] हंस, फरवरी 2010-पृ.23
[13] हंस, फरवरी 2010-पृ.23
[14] डॉ.रमेश कुंतल मेघ, सौंदर्य मूल्य और मूल्यांकन-पृ.34
[15] हिंदुस्तानी, अंक-4, भाग-70-पृ.93
[16] हंस, मई 2008-पृ.39
[17] निरुपमा सेवती, आतंक बी ा कहानी संग्रह, सब में से एक (कहानी)-पृ.9
[18] निरुपमा सेवती, आतंक बी ा कहानी संग्रह, सब में से एक (कहानी)-पृ.45
[19] प्रगतिशील वसुधा 79-पृ.129
[20] प्रगतिशील वसुधा 79-पृ.129
[21] प्रगतिशील वसुधा 79-पृ.130
[22] तथाक्रम, ानवरी-मा ि 2001-पृ.62
[23] तथाक्रम, ानवरी-मा ि 2001-पृ.62
[24] हिंदुस्तानी अंक 5, भाग 70-पृ.94
[25] हिंदुस्तानी अंक 4, भाग 70-पृ.95
[26] रमेश बक्षी, पिता दर पिता (कहानी)-पृ.20 व 24, रूपांबरा प्रकाशन, 1971 कलकत्ता
[27] सारिका, फरवरी 1972, कहानी (दिन ार्या), दूधनाथ सिंह
[28] मणिका मोहिनी, अनलकी नंबर, कहानी ून 1973, ग्रीष्मांक
[29] कथन, ुलाई-सितंबर 2002-पृ.86
[30] कथन, ुलाई-सितंबर 2002-पृ.87
[31] कथन ानवरी मा ि 2001-पृ.87
[32] प्रगतिशील वसुधा-80-पृ.301
[33] प्रगतिशील वसुधा-80-पृ.306
[34] प्रगतिशील वसुधा-80-पृ.309
[35] प्रगतिशील वसुधा-80-पृ.310
[36] ब ारंग बिहारी, हिंदी दलित कहानीःनयी पी ी, प्रगतिशील वसुधा-80-पृ.128
[37] ब ारंग बिहारी, हिंदी दलित कहानीःनयी पी ी, प्रगतिशील वसुधा-80-पृ.128

चतुर्थ अध्याय

उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति

ातुर्थ अध्याय

उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति

अंतिम दो दशकों में कहानीकार के रूप में सर्वाधिक ार्ित उदय प्रकाश की कहानियों में औपन्यासिक विस्तार तो है ही, काव्य तत्व भी भरा पड़ा है। फंतासी इनके नैरेशन का मुख्य हथियार है। वे एक ऐसे कहानीकार हैं ाो परंपरागत शिल्प-विधान को तोड़कर नये शिल्प का गठन करते हैं ाो समकालीन सामाािक यथार्थ को अभिव्यक्त करने में पूर्णतः समर्थ हैं। उदय प्रकाश की कहानियाँ सामाािक अंतर्विरोधों से टकराती हैं, और टकराकर एक नये मार्ग का निर्माण करती हैं ाो पूर्णतः लोकतांत्रिक पद्धति पर आधारित होता है। वे कवि, कहानीकार, अनुवादक, फिल्मकार होने के साथ-साथ अपने समय में ाल रहे प्रायः सभी विमर्शों पर गहरी नज़र रखते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियों में वर्तमान समय और समा ा का िात्र अपनी संपूर्णता के साथ िात्रित हुआ है। उनकी कहानियों का स्वर एक नहीं अनेक हैं। छायावादी दौर में समा ा को देखने की िातनी व्यापक एवं नूतन दृष्टि प्रेम ंद में थी, उतनी ही अपने समय और समा ा को देखने की व्यापक एवं पैनी दृष्टि उदय प्रकाश में भी है।

वे वर्तमानता के र ानाकार हैं। भूमंडलीकरण वर्तमान समस्याओं में सबसे बड़ी एवं ताकतवर समस्या है। इसका विस्तार इतना व्यापक है कि समस्त भूमंडल इसके आगोश में आ गया है। भूमंडलीकरण ने मानव समा ा को न केवल प्रभावित किया है। बल्कि अनेक ऐसी समस्याओं को ान्म दिया है, िासे मानव समा ा का

मूल ाँ ा बिखर गया है। साहित्य सदैव युग, क्षण, प्र ाति के मेल से निर्मित होता है। ये तीनों तत्व उदय प्रकाश की कहानियों में भरे-पूरेपन के साथ व्यक्त हुए हैं।

उदय प्रकाश की कहानियाँ भूमंडलीकरण के काले नकाबपोश को बड़ी बेरहमी से उघारती हैं और उसके घिनौने कुकृत्यों को प्रकाश में लाती हैं। ि ास प्रकार मध्यकाल में वर्ण, ाति, संप्रदाय, धर्म आदि का विरोध करने के लिए कबीर ने प्रतीक शैली का प्रयोग किया और आधुनिक काल में मक्तिबोध ने सामा िक, रा ानीतिक, प्रशासनिक भ्रष्टा ाार को सामने लाने के लिए फैंटेसी शैली का। ठीक उसी प्रकार उदय प्रकाश वर्तमान शासन-प्रशासन, बा ाार, मीडिया, संप्रदायवाद, नव्य पूँ ीवादी व्यवस्था की खोखली नीतियों की पोल खोलने के लिए प्रतीक एवं फंतासी का प्रयोग करते हैं।

प्या ा की तरह उदय प्रकाश की कहानियों की अनेक परते हैं। उन्हें खोले बिना न तो कहानियों के कथ्य तक पहुँ ाा ाा सकता है और न ही उन कहानियों में व्यक्त व्यंग्य तक ही। उदय प्रकाश की लगभग प्रत्येक कहानी में भूमंडलीकरण की ालक देखने को मिलती है। फिर भी अध्ययन की सुविधा हेतु केवल उन्हीं कहानियों को ुना गया है ि ान कहानियों में भूमंडलीकरण अपने व्यापक स्वरूप के साथ व्यक्त हुआ है। ि ान कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति व्यापक पैमाने पर हुई है वे निम्नलिखित हैं-'पीली छतरी वाली लड़की', 'पाल गोमरा का स्कूटर', 'मोहनदास', 'तिरिछ', 'राम स ीवन की प्रेम कथा', 'और अंत में प्रार्थना', 'हीरा लाल का भूत', 'दत्तात्रेय के दुःख', 'छप्पन तोले की करधन', 'वारेन हेंस्टिंग्स का साँड', 'दरियाई घोड़ा', 'टेप ा ू', 'दिल्ली की दीवार', 'असत्य का भौतिक प्रमाण', 'थर्ड डिग्री', 'आ ाार्य की कराह', 'आ ाार्य की र ााई', 'दद्दू तिवारीःगणनाधिकारी' इत्यादि।

प्रस्तुत अध्याय में उपर्युक्त कहानियों के आलोक में भूमंडलीकरण की विभिन्न अभिव्यक्तियों को विश्लेषित एवं व्याख्यायित करने का प्रयास किया ाायेगा।

उदय प्रकाश की कहानियाँ अपने समय एवं समा ा से न केवल गहन संवाद करती है अपितु उसकी प्रत्येक समस्या से टकराती भी हैं। लेखक स्वयं वर्तमान समय एवं समा ा के बारे में कहता है-"मैं ाब अपने समय के बारे में सो ाता हूँ तो मेरी पहली प्रतिक्रिया यही होती है कि मैं इसको नहीं ाानता। कुछ उसी तरह, ैसे मछली समुद्र को नहीं ाानती। ऊँट रेगिस्तान को नहीं ाानता। ईश्वर सृष्टि को नहीं ाानता। ािड़िया आकाश को नहीं ाानती। कुछ-कुछ उसी तरह, ैसे मधुमक्खी शहद को नहीं ाानती। ाो ािसे र ाता है या ाो ािसे ाीता है, उसे शायद वह सबसे कम ाानता है। ... स ााई यह है कि समय के ाेहरे यानी भविष्य के बारे में आ ा तक का हर अनुमान हर दावा गलत और भ्रामक सिद्ध हुआ है।"[1]

कहने का आशय यह है कि आ ा हम लोग बा ाार के युग में ाी रहे हैं। पर बा ाार की अर्थनीतियों एवं रणनीतियों के बारे में कुछ भी नहीं ाानते हैं। यह मौ ाूदा व्यवस्था की देन है ाो हमें हर स्तर पर विवेक, वि ाार और यथार्थ- ाेतना से परे बनाए रखने की मंशा रखती है। उदय प्रकाश ने यह सवाल ठीक ही उठाया है कि 'हम न तो कहानी का ाँ ाा बदल पा रहे हैं और न ही इस व्यवस्था को।' यानी कि कहानी का ाँ ाा तब बदलेगा ाब यह व्यवस्था बदलेगी और व्यवस्था दरअसल तब बदलेगी ाब कहानी का ाँ ाा बदलेगा। व्यवस्था और कहानी दोनों एक दूसरे के समानांतर ालती हैं। समस्या यह है कि इनमें से पहले किसे बदलने की कोशिश करनी ााहिए। निश ाय ही उदय प्रकाश बदलाव का यह दायित्व कहानी पर डालना ााहते हैं। कहानी पहले खुद को बदले और अपने बदले हुए रूप में वह व्यवस्था को बदलने में खुद को खपाए। कहानी बदलेगी तो उसका पाठक भी बदलेगा तो...? निश ाय ही यहाँ पाठक से आशय देश के मध्यवर्ग से है। यह मध्यवर्ग यदि बदल गया, तो देश की बाकी बहुत सारी ाीज़ें धीरे-धीरे स्वयं बदलने की प्रक्रिया में आ ााएँगी। आम ानता बदलेगी और फिर हो सकता है, अंततः यह व्यवस्था भी बदल ााए।

व्यवस्था बदलाव की इसी ाद्दो ाहद में उदय प्रकाश ने सैकड़ों कहानियों का सृ ान किया है। ाो पहले नव्य पूँ ाीवादी व्यवस्था की आर्थिक नीतियों का पर्दाफाश करती हैं फिर बा ाार के भ्रामक सं ााल को तोड़ती है।

बा ाार एक सर्वग्रासी प्रक्रिया बन गयी है। प्रत्येक व्यक्ति का रास्ता इसी बा ाार से होकर   ााता है। उदय प्रकाश 'पीली छतरी वाली लड़की' में कहते हैं कि बा ाार ने प्रत्येक ाीज़ को वस्तु में तब्दील कर दिया यहाँ तक कि मनुष्य को भी। "इस आदमी ने बीसवीं सदी के अंतिम दशकों में पूँ ाी, सत्ता और तकनीक की समू ाी ताकत को अपनी मुट्ठियों में भरकर कहा था, स्वतंत्रता! ाीखते हुए आ ाादी! अपनी सारी एषणाओं को   ााग   ााने दो। अपनी सारी इंद्रियों को इस पृथ्वी पर खुल्ला ारने और वि ारने दो। इस धरती पर ाो कुछ भी है, तुम्हारे द्वारा भोगे   ााने के लिए है, न कोई राष्ट्र है, न कोई देश। समू ाा भूमंडल तुम्हारा है। न कुछ नैतिक है, न कुछ अनैतिक। न कुछ पाप है, न पुण्य। खाओ, पियो और मौ ा करो। ना ाो....ऽऽ वूगी... वूगी...। गाओ... ऽऽ वूगी... वूगी।। खाओ... खूब खाओ। कमाओ, खूब कमाओ, वूगी... वूगी। इस   ागत के समस्त पदार्थ तुम्हारे उपभोग के लिए हैं। वूगी... वूगी...। और याद रखो स्त्री भी एक पदार्थ है। वूगी... वूगी।"[2]

हम देखते हैं कि बा ाार पहले लोगों के टेस्ट को बदलता है और धीरे-धीरे अपनी आवश्यकतानुकूल उनकी आदतें। फिर क्या हम बा ाार की ाीज़ों के आदी हो   ााते हैं। मनुष्य की   ारूरतें अब बा ाार द्वारा निर्धारित होने लगी हैं। वास्तविकता तो यह है कि नागरिक समा ा का स्थान अब बा ाार ने ले लिया है। लोगों की मानसिकता नि ाता तक संकु ाित हो गयी है। 'परहित सरिस धरम नहि भाई' की भावना अब 'स्वहित सरिस धरम नहि भाई' में तब्दील हो गयी है। मनुष्य अब सिर्फ कंपनियों, बड़ी-बड़ी संस्थाओं तथा माफिया और गिरोह का सदस्य है-"दरअसल अब ये दुनिया ट्रेडर्स की, व्यापारियों की हो गयी है वे लाखों डालर-पाउंड लेकर सफर करते हैं, अरबों-खरबों का ट्रां ोक्शन होता है। ये लोग मान ही नहीं सकते कि अभी भी हिंदुस्तान में ऐसे लोग ब ो हुए हैं ि ान्हें बहुत दौलत नहीं   ाहिए और वे अमेरिका या फ्रांस व्यापार करने नहीं, अकादमिक या दूसरे कारणों से   ााते हैं।

तो क्या ये ो भूमंडलीकरण हो रहा है यह उन्हीं के लिए है, ो विश्व बा ार के हिस्से हैं, सटोरिये, व्यापारी, तस्कर, अपराधी या सरकारी मंत्री-अफसर... 'दिस इज़ द एंड ऑफ द सिविल सोसायटी' अब कोई नागरिक समा । नहीं ब ा, सिर्फ सरकारें हैं, कंपनियाँ हैं, संस्थाएँ हैं, माफिया और गिरोह हैं और अगर अब भी तुम किसी लेखक, कवि या विद्वान को हवाई हा । में सवार होकर विदेश ाते देखते हो, तो ान लो, वह किसी कंपनी, किसी व्यापारी, किसी संस्था या गिरोह का सदस्य या दलाल है। आल्वेज़ डाउट हिज़ इंटिग्रिटी।"[3]

उदय प्रकाश की एक अन्य कहानी 'पालगोमरा का स्कूटर' में आधुनिक ीवन की तलाश की गई है। पूँ ीवाद के प्रभाव से िस प्रकार पूर्वी यूरोप का समा ावाद साफ हुआ उसी प्रकार हिंदी की पत्रिकाएँ और अखबार भी साफ हो गये। बाज़ार ब रहा है, हर ीज़ बिकाऊ है। कोई लड़की रातों-रात विज्ञापन की दुनिया में आकर टाटा सफारी, कैंटेसा आदि में ालने लगती है, लेकिन हश्र होता है-उसका नामोनिशान मिट ाना। इन यथार्थों को उदय प्रकाश इस कहानी में बड़ी बेबाकी से रेखांकित करते हैं-"बा ार अब सभी ीज़ों का विकल्प बन ुका था। शहर, गाँव कस्बे बड़ी तेज़ी से बा ार में बदल रहे थे हर घर दुकान में तब्दील हो रहा था।बाप अपने बेटे को इसलिए घर से निकाल भगा रहा था, कि वह बा ार में कहीं फिट नहीं बैठ रहा था। पत्नियाँ अपने पतियों को छोड़-छोड़कर भाग रहीं थीं क्योंकि बा ार में उनके पतियों की कोई खास माँग नहीं थी। औरत बिकाऊ और मर्द कमाऊ का महान ाका ाक युग आ गया था।"[4]

इस कहानी में वर्तमान ीवन स्थिति को बड़ी सं ीदगी से प्रस्तुत किया गया है। कहानी यह दर्शाती है कि बा ार में केवल उन्हीं लोगों की मांग है ो बा ार की ारूरतों को पूरा करने में सक्षम हैं, विषय को थोड़ा स्पष्ट करने के लिए अभी हाल में हुए आई.पी.एल. मै । को सामने रखा ा सकता है िसमें शोएब मलिक, पीटरसन तथा सनत ायसूर्या को इसलिए बैठना पड़ा कि वे आउट आफ फार्म थे, िसके ालते उन बड़ी कंपनियों को करोड़ों-अरबों रुपये का घाटा हो रहा था िन्हें वे खरीद रखीं थीं। कुछ ऐसा ही हाल घायल रामगोपाल उर्फ पालगोमरा का है,

ि ानका एक्सीडेन्ट मंत्री की कार से होता है, पर मौ ूद पुलिस को भी उनकी ि ाकित्सा की कोई फिकर नहीं। पाल गोमरा का स्कूटर प्रतीक है। इस प्रतीक को स्पष्ट करते हुए स्वयं लेखक कहता है-"ि ास ईंधन से यह स्कूटर अपनी गति हासिल करेगा वह पेट्रोलियम और कुछ नहीं, ह ारों साल तक पृथ्वी के गर्भ की अग्नि और नैसर्गिक ऊष्मा से रूपांतरित वनस्पतियों का ही तो तरल कार्बनिक प्रारूप है। और इसकी तकनीक, ि ासके द्वारा इसकी गति नियंत्रित होती है, पहिए घूमते हैं और यह दौड़ता है, उस तकनीक का सार दाँती और ारखी की वही यंत्र प्रणाली है ि ासका प्रयोग महात्मा गाँधी ने ारखे के प्रतीकात्मक रूप में, ब्रिटिश साम्रा य के विरुद्ध किया था।

इस तरह स्कूटर अपने प्रतीकात्मक रूप में इस नव औपनिवेशिक, भूमंडलीकृत उपभोक्तावादी, बाज़ारू साम्रा यवाद का सशक्त विरोध करता है। अगर गाँधी ी को यह मानने की स्वतंत्रता थी कि इंग्लैंड के विशाल मशीनी उद्योगों के विरुद्ध ारखा एक यंत्र नहीं बल्कि दस्तकारों और बुनकरों या मनुष्यों के हाथ का ही नैसर्गिक विस्तार है,तो हिंदी भाषा के फक्कड़ कवि पॉलगोमरा को भी यह मानने का अधिकार था कि आ ा के युग में स्कूटर दरअसल मनुष्य के पैरों का ही अत्यन्त मानवीय विस्तार है।"[5]

स्पष्ट है कि गाँधी की तरह हिंदी कवि पालगोमरा भी वर्तमान बा ार आधारित नव्य पूँ ीवादी व्यवस्था से निरंतर लड़ता है, उसे कई बार कु ला भी ाता है, बाहर निकाल कर फेंका ाता है फिर भी अपनी ि ािीविषा और ीवटता के ालते वो ि ांदा है। पालगोमरा यहाँ आम ान के प्रतीक हैं।

बा ारवाद ने किस प्रकार आम ानता को अपनी गिरफ्त में लिया है यह बतलाने की ारूरत नहीं। आ ा बड़ी कंपनियाँ रो ी-रोटी के नाम पर कितने गरीबों का खून ूस रही हैं। यह भी कहने की ारूरत नहीं, बा ार एवं मीडिया ने स्त्री को कैसे अपने मुनाफे के लिए कम कपड़ों में लाकर बेपर्द किया है। यह भी कहने की आवश्यकता नहीं, वास्तविकता तो यह है कि बा ार हमारे खाने-पीने से लेकर सोने तक फैला है। उसके विस्तार का कैनवास इतना व्यापक है कि मनुष्य ही नहीं पशु-

पक्षी एवं प्रकृति परिवेश भी उसके आगोश में आ गये हैं। आ ा प्रत्येक घर में, प्रत्येक व्यक्ति के मन में बा ार द्वारा दिये गये प्रलोभनों का स्वप्न सोते और ागते दोनों अवस्था में ालता रहता है। देखिए मोहनदास कहानी में लेखक का यह वक्तव्य-"लेकिन स ा तो यह है कि ऐसी पुरानी और पिछड़ी हुई शैली, शिल्प और भाषा में ो ब्यौरा आपके सामने प्रस्तुत है, वह उसी समय का है ाब 9-11 सितंबर हो ुका है और न्यूयार्क के दो गगन ुंबी व्यापारिक इमारतों के गिरने की प्रतिक्रिया में एशिया के दो सार्वभौमिक, संप्रभुता-संपन्न राष्ट्रों को धूल और मलबे में बदला ा ुका है। ाब अमेरिका और यूरोप के ईश्वर के अलावा बाकी सारे ईश्वरों के सामने प्रार्थना में ुके हुए लोग फाँसिस्ट, आतंकवादी और सांप्रदायिक मान लिए गए हैं। तेल, गैस,पानी, बा ार, मुनाफे और लूट के लिए हर रो ा कंपनियाँ, सरकारें और फौ ों समू ाी पृथ्वी में दिन-रात निर्दोषों की हत्याएँ कर रही हैं।

ऐसा समय, ािसमें अगर गौर से देखें तो ो भी सत्ता में है, उसमें से हर कोई एक-दूसरे का क्लोन है।

हर कोई एक ैसी ब्रांड का उपभोक्ता है। वह एक ैसी ाीज़ें पी रहा है, एक ैसी ाीज़ें खा रहा है। एक ैसी कंपनियों की कारों में घूम रहा है। हर किसी के एकाउंट एक ैसे बैंकों में हैं। सभी की ोबों में एक ैसे ए टी एम क्रेडिट कार्ड और हाथ में एक ैसे मोबाइल हैं। एक ैसी ब्रांड की शराब के नशे में अखबारों के पे ा एक से लेकर पे ा थ्री तक या टी.वी. के एक से लेकर सत्तर ैनल तक वे एक ैसे धुत, बेशर्म और नंगे हैं। गौर से देखिए उसकी त्व ाा का रंग और उनकी भाषा एक है।"[6]

दरअसल बा ारवाद अपना शिकार कई शस्त्रों के मेल से करता है, ािसमें मीडिया व र्स्व, उपभोक्तावादी संस्कृति और बहुत कुछ शासन व्यवस्था आदि मिलकर खेल खेलते हैं। इस भूमंडलीय व्यवस्था ने इतिहास का अंत करके न केवल परंपरा पर गहरी ोट की बल्कि धर्म एवं आस्था का आधार 'ईश्वर' ािससे सामान्य ानता ाीने की शक्ति पाती थी, को भी मार डाला। अब इस नयी सभ्यता के केंद्र में मनुष्य नहीं, व्यवस्था और सत्ता है, ािसमें बड़े लोगों के भोग-विलास के

लिए स्त्री और आम ान खिलौने के समान है। प्रतिष्ठा सम्मान, आ ार-व्यवहार सब कुछ सू ाना पर आधारित है। इस संबंध में उदय प्रकाश की कहानी 'पालगोमरा का स्कूटर' का यह दृश्य सामने रखा ा सकता है। "सुनो, सुनो, सुनो! इतिहास का अब अंत हो गया है। अब इस नई सभ्यता के केंद्र में मनुष्य नहीं, व्यवस्था और सत्ता है यानी सिस्टम एंड पावर। मनुष्य तो अब सिर्फ पर्यावरण का हिस्सा है। सत्ता और बा ार, पूँ ी और व्यापार की सेवा ही अब शब्दों और भाषा का धर्म है। अब कहीं कोई यथार्थ नहीं है। ारों ओर सिर्फ सू ानाएँ हैं।

मु फ्फरनगर के गेहूँ के खेतों में 2 अक्तूबर, 1994 को ि न प ीस उत्तराखंडी महिलाओं को भारतवर्ष की पुलिस ने खदेड़-खदेड़कर रेप किया, वह सिर्फ एक सू ाना है। फिलीपीन के शहर मनीला में दिल्ली के बसंत कुं । इलाके में रहनेवाली लड़की सुस्मिता सेन के मिस युनिवर्स ुने ाने की सू ाना के मुकाबले एक निहायत फटी ार सू ाना, क्योंकि भारत अब भूमंडलीकरण के कारण अंतर्राष्ट्रीय अर्थतंत्र का एक उभरता हुआ खुला मालगोदाम और विशाल उपभोक्ता बा ार बन गया है। मु फ्फरनगर की सू ाना से इस माल-गोदाम की ो औरत अंतर्राष्ट्रीय बा ार में भिंडी, ककड़ी, आलू या मूली साबित हो रही थी, मनीला की सू ाना ने उसे सोना, अफीम या यूरेनियम ैसा कीमती और महँगा बना दिया है। और 2 अक्टूबर की तारीख अब कोई भी प्रतीक बनने की पुरानी क्षमता खो ुकी है क्योंकि ईश्वर अब मर ुका है।"[7]

एक बात तो इस टिप्पणी से साफ है कि बा ार अपने विकास के लिए प्रिंट मीडिया को आधार बनाता है। इसके पीछे दो खेल छुपे होते हैं एक तो यह कि लड़कियाँ ि नको विज्ञापन के रिये अधनंगा करके नता के सामने पेश किया ाता है, ि ससे लोग एक तरफ एक प्रकार के सेक्स सुख की प्राप्ति करते हैं और दूसरी ओर बा ार अपना उत्पाद लोगों तक पहुँ ाता है। कहना गलत न होगा कि कोकोकोला, पेप्सी आदि के विज्ञापन में लड़कियों का कम कपड़े में विज्ञापन करना और कोकोकोला का ाग उनके कोमल अंगों पर तैरना अब सामान्य सी बात हो गयी है। स्त्री की कोमल त्व ा से मोबाइल एवं कार की ि किनी स्किन की तुलना

दिखाना यह साबित करता है कि स्त्रियाँ अब वस्तु के रूप में रूपांतरित हो रही हैं। और वस्तुओं के लिए भावना एवं संवेदना का कोई महत्व नहीं, वे उपभोग के लिए हैं। इस प्रकार हम विज्ञापन में स्त्री के कोमल स्पर्श और विज्ञापन में दिखाए गए वस्तु दोनों का उपभोग करते हैं। स्त्री अपनी अस्मिता बे ाती है और बा ार अपना उत्पाद। देखिए-"अभी आठ महीने पहले किशनग ़ के नता फ्लैट में रहनेवाली सर गंगाराम हॉस्पिटल के सफाई कर्म ारी रामऔतार आर्य की सत्रह साल की बेटी सुनीला रातों-रात मालामाल हो गयी थी, क्योंकि किसी टी.वी. के विज्ञापन में वह आठ फुट बाई ार फुट साइ । के विशाल ब्लेड के मॉडल पर नंगी सो गई थी। सुनीला को अपने ेहरे पर उस ब्राण्ड के ब्लेड से होनेवाली शेविंग से उप ानेवाले, ि ड़ियों के पर के स्पर्श ैसे सुख और आनंदातिरेक को दस सेकंड के भीतर-भीतर व्यक्त करना था। यह काम अपने ेहरे के क्लो । शॉट में उसने इतनी निमग्न कुशलता और स्वप्नातीत भाव प्रवणता के साथ किया था कि देश के एक बड़े ि त्रकार ने एक अंग्रेज़ी अखबार में वक्तव्य दिया था कि वे एक हफ्ते में उस विज्ञापन को डे ़ सौ बार देख ुके हैं और अब आनेवाले दो वर्षों तक वे लगातार सुनीला के न्यूड्स ही बनाएँगे।"[8]

बात को और अधिक स्पष्ट करने के लिए उदय ने एक दूसरा उदाहरण भी पेश किया है। मीडिया से ुड़े होने के कारण बा ार एवं मीडिया के सा ा खेल के बारे में ो स्पष्ट सम । विकसित हुई है, उसको व्यक्त करते हुए वे कहते हैं-"बिहार के छपरा ि ले के प्राइमरी स्कूल की टी ारी का काम छोड़कर अपने उ ाक्के प्रेमी के साथ दिल्ली भाग आनेवाली आशा मिश्रा नाम की लड़की कंटेसा क्वालिस में ाल रही थी। उसने किसी विज्ञापन में एक बलिष्ठ काले रंग के अरबी घोड़े की खुरदरी पीठ पर बैठकर, अपने पारभासक ाँघिए के भीतर से 'द ब्लैक हॉर्स' नामक बियर की बोतल निकालकर छातियों में उडेल ली थी और घोड़े की पीठ पर बैठी-बैठी वह खुद बियर की ाग में बदल गयी थी। काले घोड़े की खुरदुरी पीठ पर सिर्फ आशा मिश्रा का फेन ब ा था, ो धीरे-धीरे उस बियर की ब्रांड में बदल रहा था।

इस विज्ञापन की, राष्ट्रीय स्तर पर मीडिया विशेषज्ञों और अन्य बौद्धिकों के बी ा बहुत ा र्ा हुई थी। लेकिन इस विज्ञापन को बनानेवाली 'एडकंपनी' ने दावा किया था कि आशा मिश्रा के अंडरवियर से निकलती हुई बियर की बोतल का शॉट और छाती में बियर उलटते ही आशा मिश्रा के स्तनों का ाग में रूपांतरण इतना प्रभावशाली है कि इससे इस नए ब्रांड की मार्केटिंग का टेकऑप ही ाबरदस्त होगा। इस विज्ञापन के प्रिव्यू सर्वे के दौरान कंपनी ने पाया था कि बीस सेकंड के इस विज्ञापन को देखते हुए दस में से सात पुरुषों ने, ि ानकी आयु वर्ग 15 से 60 वर्ष की थी, 'मास्टरबेट' की इ छा का प्रभाव स्वीकार किया था। परिणाम यह है कि हर एक करोड़ में से सत्तर लाख दर्शकों ने 'सेक्स की फीलिंग' अपने भीतर पाई थी और 'द ब्लैक हॉर्स बियर' अनुमानित लक्ष्य से 27 प्रतिशत यादा बिक्री द ि करा गई थी।"[9]

कहानी के इस वर्णन से उदय प्रकाश प्रिंट मीडिया ओर बा ाार के खेल को सामने लाते हैं, ाो महत्वाकांक्षी महिलाओं को आर्थिक प्रलोभन देकर उस ि ास्म को भी उत्पाद के साथ बे ाता है ि ासकी सुरक्षा औरत आ ाीवन करती है। उदय प्रकाश ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों से संबंध रखने के कारण उनकी कहानियों में समा ा का एक भरा-पूरा ि ात्र उभरता है। वे अपनी कहानी 'राम स ाीवन की प्रेम कथा' में पाश ाात्य संस्कृति का प्रभाव कैसे ग्रामीण ानता पर पड़ता इसका म ाेदार वर्णन देखने को मिलता है। राम स ाीवन ाो एक ग्रामीण समुदाय का एक गरीब लड़का है, समा ा सेवा और समा ा हित से ब .कर उसके लिए कुछ भी नहीं था। यकीन ाानिए शहर आते ही कैसे अनु के प्रेम में बंध गया यह ाौकाने वाली घटना है। 'अनीता' के बारे में बिना ाने-सुने उससे बेइंतहा मोहब्बत करना यह दर्शाता है कि साधारण ानता कैसे शहरों में ााने के बाद पाश ाात्य ाीवन शैली, बा ाारू संस्कृति और अनेक ऐसी तमाम ाीज़ों की शिकार होती है ि ासे उसका कोई लेना देना नहीं होता-"पूँ ाीवाद मानवीय कलाओं का सबसे बड़ा और निर्मम शत्रु होता है। उन्होंने ाालू दुनियादार र्रे का प्रेम न करके एक सुंदर र ाना को ग .ने की कोशिश की थी। यहाँ प्रेम एक रिश्ता नहीं, एक कला था, उत्कृष्ट मानवीय कलाकृति, लेकिन

पूँ ीवादी व्यवस्था का ही यह दुर्दांत प्रभाव था कि अपने निकट से निकट के दोस्तों से भी वे संवाद नहीं बना पा रहे थे। 'एलियनेशन' संबंधों के बी ा अपरि ाय के विंध्या ाल खड़ा कर रहा था।"[10]

उदय प्रकाश सामा ि ाक यथार्थ को प्रकट करने के लिए 'पालगोमरा का स्कूटर' में संकलित कहानी 'वारेन हेंस्टिंग का साँड' में कहते हैं-"यहाँ हिंदुस्तानियों का एक वर्ग ऐसा है, ाो ाल्द से ाल्द अमीर बनना ाहता है। वह प्रा ीन काल के रोम के गुलामों से भी यादा गुलाम है। इसमें यादातर ऊँ ी ाति के लोग हैं। अंग्रेज़ी बोलने लगे हैं,यूरोपीय कपड़े पहनते हैं और उन्होंने हिंदुस्तान की सारी पुरानी परंपराओं को कोसला कहना शुरू कर दिया है।" "वे हमारी गुलाम छायाएँ हैं। इंडिया में हमारा सारा प्रशासन वही ालाएँगे। हम ाब इंडिया को छोड़ यूरोप में लौट आएँगे, तब भी वहाँ हमारी यही गुलाम छायाएँ रा ा करेंगी।"[11]

इस प्रकार उदय प्रकाश द्वारा यहाँ भूमंडलीकरण के व्यापक प्रभाव की ा र्ा की गयी है ि ासने सामा ि ाक यथार्थ के मूल स्वरूप को इतना विकृत कर दिया है कि सही और गलत में भेद कर पाना मुश्किल हो गया है। यही कारण है कि हम सब कुछ ाानते हुए भी गलत दिशा में ाा रहे हैं।

उदय प्रकाश वर्तमान सामा ि ाक व्यवस्था के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि-" ैसा समा ा अब बन रहा है, उसको सम ाने के लिए नैतिकतावादी मापदंड अब अप्रासंगिक हो गये हैं। न्याय और नैतिकता इस नये समा ा के विश्लेषण के मुख्य कारक नहीं हैं। अब सभ्यता के केंद्र में मनुष्य या उसका ीवन है ही नहीं, वह तो अब परिधि में ाा ुका है। वह पर्यावरण का हिस्सा है, सभ्यता के केंद्र में अब व्यवस्था, पूँ ी और सत्ता है और अब रा ानीति, अर्थ ागत और समा ा के अन्य क्षेत्रों में ही नहीं, संस्कृति में भी ाो विमर्श होगा उसके केंद्र में मनुष्य नहीं सत्ता होगी।"[12]

भूमंडलीकरण ने समा ा के संपूर्ण ाँ ो को बदल डाला है। नैतिकता, ईमानदारी, मानवीय संबंध, देश प्रेम, अहिंसा ैसे तत्व समा ा एवं मनुष्य से धीरे-धीरे गायब होते गये हैं। आ ा का समा ा ईर्ष्या, द्वेष, कलह, भ्रष्टा ाार, लूट खसोट

आदि में डूबा हुआ है। स्त्रियाँ इतनी महत्वाकांक्षी हो गयी हैं कि आर्थिक विकास के लिए अपना ि ास्म तक बे ा रही हैं, समू ाा सिनेमा ागत एवं मीडिया तंत्र इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। समा ा एवं संसार सही मायने में दो वर्गों में विभक्त है। एक तो वह ाो समू ाी दुनिया के भौतिक संसाधनों का भरपूर उपयोग कर रहा है और दूसरा वर्ग वह ाो दिन-रात हाड़फोड़ मेहनत करने के बाद भी दो ाून की रोटी की व्यवस्था नहीं कर पा रहा है। यह न ाारा न केवल एशियाई देशों में है बल्कि दुनिया के विकसित कहे ाानेवाले राष्ट्र अमेरिका, ाीन, ाापान आदि में भी है। "ज्ञान, सू ाना, संप्रेषण के इस विराट पूँ ाीवादी उद्योग ने महाशोर का ऐसा साम्रा य निर्मित कर डाला है, ि ासमें सारा समा ा विमू ़, दिग्भ्रमित, बहरा, गूँगा और अंधा हो गया है। वह सिर्फ वही सुन रहा है, ाो उसे सुनाया ाा रहा है। वही देख रहा है, ाो उसे दिखाया ाा रहा है। वही सो ा रहा है, ाो सो ाने के लिए उसे मॉनिटर किया ाा रहा है। क्या इतना निरुपाय, इतना बेबस और इतना निरीह यह मनुष्य पहले कभी था? आप खुद देखिए टेक्नॉलॉ ाी इतना यादा संप्रेषण का उत्पादन कर रही है कि मनुष्य एक दूसरे को कुछ भी संप्रेषित नहीं कर पा रहा है।"[13]

लेखक की उपर्युक्त टिप्पणी को 'मोहनदास' कहानी में देखा ाा सकता है ाहाँ शारदा ाो एक सामान्य लड़की की प्रतीक है, कैसे बा ाार के ांगुल में फंस ााती है और फिर वह बा ाारी संस्कृति के सपने देखने लगती है, वह ि ास समा ा व्यवस्था में अब तक पली-ब ़ी थी उसे छोड़ने को सहसा रा ाी हो ााती है, यह एक प्रकार से भारतीय समा ा की संस्कृति पर पाश ाात्य समा ा की संस्कृति की वि ाय है-"शारदा को पिछले एक साल से बा ाार में 'ऐश्वर्या ब्यूटी पार्लर' में नौकरी मिल गयी थी। वहाँ की शिखा मैडम उसे बुहत प्यार करती थी और उसकी प ़ाई में मदद भी करती थी। वह कहती थीं-"शारदा मैं तु ो एक दिन ऐसा मॉडल बनाऊँगी कि तू मिस वर्ल्ड बन ााएगी और टी वी पर छा ााएगी। आठ साल की शारदा स ामु ा रात में ऐसे ही सपने देखने लगी थी।"[14]

उदय प्रकाश गरीबी में पले-ब ़े होने के कारण समा ा को न ादीक से देखा था, ि ासमें मेहनतकश इंसान बेगार रहता है, शिक्षित व्यक्ति बेरो ागारी का शिकार

होता है, तथा उ ावर्ग के धनी व्यक्ति अशिक्षित होते हुए भी शासन एवं सत्ता के ऊँ ो-ऊँ ो पदों पर आसीन हैं। समा ा का यह भोगा हुआ यथार्थ उनकी कई कहानियों में व्यक्त हुआ है। अब ‘मोहनदास’ कहानी को ही लीि ाए ि ासमें मोहनदास एक प ़ा, लिखा डिग्रीधारी व्यक्ति होने के बाव ाूद भी बेरो ागार है तथा उसकी ागह एक अन्य व्यक्ति ाो अशिक्षित है, पर धनी और शोर्स फुल होने के कारण ‘मोहनदास’ के नाम पर फ ाीं नौकरी करता है। ‘मोहनदास’ इस बात को ाानते हुए भी इसका विरोध भ्रष्ट निकम्मी शासन व्यवस्था के समक्ष नहीं कर पाता। इस प्रकार यह कहानी समकालीन सामाि ाक एवं रा ानीतिक परिदृश्य को खोलकर रख देती है। "लेकिन असल में मोहनदास न तो पागल हुआ था, न उसकी स्मृति में कोई खोट थी। उसकी ोतना पर ाो घाव लगा था, वह लगभग एक हफ्ते की अखंड नींद, मूर्छा या नशे के दौरान ाुप ााप भर गया। ाब वह ाागा, तो वह फिर पहले ौसा मोहनदास था, ाो अ छी तरह से ाानता था कि असली मोहनदास वल्द काबादास, साकिन पुरबनरा, थाना और ि ाला अनूपपुर, मध्यप्रदेश वही है, ि ासने आठ-दस साल पहले शासकीय एम. ाी.कॉले ा से बी.ए. किया था और मेरिट में दूसरा स्थान हासिल किया था। असली मोहनदास वही था, ि ासे नौकरियाँ इसलिए नहीं मिलती थीं क्योंकि उसके पास कोई सिफारिश, संपर्क, तिकड़म और घूस के लिए रुपये नहीं थे। वह किसी गिरोह या माफिया का सदस्य नहीं था, क्योंकि वह उस ााति और वर्ग का नहीं था, ि ान ाातियों-वर्गों के पास ताकत थी। उसे अ छी तरह मालूम था कि उसके साथ और उसके ौसे असंख्य लोगों के साथ लगातार पिछले कई सालों से धोखाधड़ी और छल किया ााता रहा है, लेकिन वह कुछ कर पाने में असहाय था।

मोहनदास को यह भी अ छी तरह से पता था कि बिछिया टोला का बिसनाथ बल्द नगेंद्रनाथ, ाो लेनिन नगर में मोहनदास विश्वकर्मा बल्द काबादास बनकर, ओरियंटल कोल माइंस में कनिष्ठ आगार अधिकारी की नौकरी करते हुए दस ह ाार से ऊपर की तनख्वाह ले रहा था, वह कतई मोहनदास नहीं था। वह एक बदमाश,

कट्टर ातिवादी, ालसा ा था, िसकी ताकत इतनी बड़ी थी कि मोहनदास उसके सामने किसी ला ार-बीमार ूहे की तरह भी नहीं था।"[15]

इस प्रकार उदय प्रकाश वर्तमान सामाि क व्यवस्था का भूमंडलीय ि त्र प्रस्तुत करते हैं। सही मायने में उनकी कहानियाँ अपनी सामाि क सभ्यता का कठिन संघर्ष है और एक तरह वैश्विक पाखंड, सामाि क पोंगापंथी, प्रशासनिक भ्रष्टा ार का क्रांतिकारी र नात्मक प्रतिरोध ही नहीं बल्कि एक सार्वभौमिक विकल्प भी है। 'और अंत में प्रार्थना' का डॉ.दिनेश मनोहर वाकणकर हो या 'मोहनदास' का मोहनदास आप पायेंगे भयावह आत्महंता समय में ीवन ीने के बाव ूद उसमें 'आस्था' का भाव प्रबल है। हारी हुई मनुष्यता को 'आस्था' की सीख देते हुए उदय प्रकाश उसे श्रद्धा की खो ा का मंत्र देते हैं। इस अघोरी समय में आस्था ही है ो समा ा को पतन से ब ा सकती है। कोई दूसरी शक्ति छलेगी और डूबायेगी। वाकणकर ने अपनी डायरी में लिखा था-

"उसकी आँखों में कहीं दया या ि न्ता के निशान नहीं थे। अगर उनमें से किसी का अपना ब ा मर रहा होता तो क्या वे यही व्यवहार करते? क्या मैं स ामु ा आदर्शवादी हूँ? लेकिन ऐसा तो नहीं लगता। कहीं ऐसा तो नहीं कि ो तंत्र या व्यवस्था यहाँ बनी हुई है, वह अपने आप में एक समानांतर प्रणाली है? वह सिर्फ अपनी ही दुनिया की ि ंताओं में व्यस्त है। शायद उसका हित ही इसमें ुड़ा हुआ हो कि लोग भूख, गरीबी, महामारी आदि से मरे। कहीं हमारे देश में लोकतंत्र का असली अर्थ ानता द्वारा अपनी शत्रु व्यवस्था का ुनाव तो नहीं है।"[16]

मोहनदास भी इस कठिन समय और भ्रष्ट समा ा में अपने अस्तित्व और स ा को पाने का अथक संघर्ष करता है पर ाब उसका स ा ही उसे लील ाने को आतुर हो ाता है तो उसे अपनी पह ान छुपाकर ही ीने की ारूरत बन ाती है। इस प्रकार यह कहानी अमरकांत की कहानी 'ि ंदगी और ोंक' की याद दिलाती है िसमें र ाुआ भ्रष्ट समा ा की निगाहों से ब ाने के लिए अपनी मौत की खबर उड़ा देता है।

उदय प्रकाश की कहानियों के विषय में यक्ष प्रश्न यह है कि ऐसा क्या है उनकी कहानियों में ो पाठक को बांधता है... बे ैन करता है... िनके अनेकों पाठ किए ा सकते हैं... ो अपने इतिहास और समा को देखने की नयी दृष्टि देता है। उनकी कहानियों को सम ाने की कुं ी है अपने समय एवं समा की सही पह ान, गहरी पैठ।

भूमंडलीकरण और उदारीकरण की प्रक्रिया में 'सत्ता और पूं ी' के नए समीकरण बनने लगे हैं। आम आदमी के लिए असुरक्षा, भय और ला ारी के सिवा कोई विकल्प नहीं ब ा है। उदय प्रकाश अपनी कहानियों में अपने समय और अतीत की ऐसी व्याख्या करते हैं कि हमारा अपने समय और समा से सीधा संवाद बनता है। सत्ता के विराट केनवास के बरक्स हम अपनी और हर उस नसामान्य की कथा प. ने लगते हैं ो कितनी बार सत्ता और सामा िक संस्था के द्वारा कु ला गया है। वह बार-बार उसमें टूटता गिरता है, लेकिन पूरी तरह हारता नहीं, हथियार नहीं डालता। वह किसी तरह अपनी शक्ति इकट्ठा कर तमाम दबावों के बाव ूद अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करता हुआ कम से कम अपनी मीन पर खड़ा रहता है। यह टकराहट उदय प्रकाश की लगभग सभी कहानियों में है।

उदय प्रकाश की कहानियाँ 'सब ऑल्टर्न' अनुभव की कहानियाँ हैं। उन्होंने अपनी कहानियों के पाठकों के विषय में लिखा है-"मैं स्वयं और मेरी र नाओं के यादातर पाठक, अपने समय, समा और यथार्थ के हाशिए के लोग हैं। समय और समा की ो केंद्रीय सत्ताएँ हैं, अर्थात् इस सामा िक, रा नैतिक, प्रशासनिक व्यवस्था की ो धुरी है, उसकी परिधि और उसके पाठक भी बाहर के लोग-बाग एक तरह के 'सब ऑल्टर्न' ीवन और अनुभव के लोग हैं। ऐसे में याद आती है 'पालगोमरा का स्कूटर' कहानी की अंतिम पंक्तियाँ-" ो प्र ातियाँ लुप्त हो रही हैं, यथार्थ मिट रहा है िनका अस्तित्व हो सके तो हम उनकी हत्या में न शामिल हों और संभव हो तो संभाल कर रख लें। उनके ित्र...। ये ित्र अतीत के स्मृति िन्ह हैं।"[17]

'हीरालाल का भूत' कहानी में लेखक ने बड़े ही दिल ास्प तरीके से सामंती व्यवस्था की घिनौनी हरकतों को सामने लाया है। तुलसी ने भी इसी सामंती प्रथा का ित्रण करते हुए मध्यकाल में कहा था-

"कलिकाल विहाल किए मनु ा
नहि मानत कोऊ अनु ा तनु ा।।"

पर आ ा का सामंतवाद पूँ ीवाद का मुखौटा लगाकर आया है ो आम ानता का न केवल मानसिक शोषण कर रहा है बल्कि शारीरिक शोषण भी कर रहा है इसका एक ित्र खीं ाते हुए हीरालाल का भूत कहानी का पात्र लल्ला पंडित कहता है-"साला ाँगर ोर, दिक बीमारी का बहाना बनाकर यहाँ ऐश कर रहा है और अपनी ावान बहू से आँखें लड़ा रहा है। सुधन्ना वैसे ही पड़ा रहा। न हिला न डुला। लल्ला पंडित ने गाली बकी और डंडे से उसे कों ा, तो भी वह वैसे काठ के लट्ठ की तरह पड़ा रहा। हिरवा की दुल्हन मुँह ाँपकर आयी और बोली, 'रहने दो पंडित ी, बड़ा ते ा ार ा.ा है इन्हें' तो लल्ला पंडित ने कहा, 'ठाकुर का खेत कौन निरायेगा ससुरी! ाल तू ही ाल उसकी ागह। कल ाब आ ा के लिए सेर-भर खवाई माँग लाया था, तब इसने नहीं सो ा कि आ ा इसका ाँगर नहीं ालेगा।'"[18]

"हीरालाल के बाप सुधन्ना के पट्टे में डे.़ एकड़ ामीन थी, लेकिन तीन साल पहले उसकी मौत के बाद ही पटवारी ने उस ामीन का कब ा हरपालसिंह के नाम लिख दिया था और ठाकुर हरपाल सिंह ने हीरालाल से कह दिया था कि वह ामीन उसका बाप पहले ही उन्हें बे ा गया था। अब हीरालाल के पास कुछ नहीं ब ा। हीरालाल शाम को ठाकुर साहब के घर का सौदा सामान लेने बा ार ाला गया था। दोपहर के बरतन ाूठे पड़े थे, इसलिए उन्हें माँ ाने और बाकी काम निपटाने फुलिया वहाँ आई हुई थी। शाम सात ब ो होंगे कि ठाकुर साहब ने फुलिया को आवा ा देकर बुलाया और उसे काग ा बही खाता देकर कहा कि इसे वह पटवारी को दे आये। शायद ठाकुर और पटवारी में पहले ही बात ीत हो ाुकी थी। फुलिया कमरे में पहुँ ी तो पटवारी ने उसे पकड़ लिया, साँकल भीतर से ा.ा ली, रेडियो की आवाज़ खूब ऊँ ी कर दी और इस तरह हीरालाल की संपत्ति का आखिरी कोना,उसकी

औरत की आबरू भी ाती रही। आधे घंटे बाद ठाकुर हरपाल सिंह भी उस कमरे में आ गये और फुलिया पटवारी के पलंग पर सिसकती रही। बाद में फुलिया को दोनों ने पाँ ा-पाँ ा रुपये दिये।"[19]

इस लंबे उद्धरण के बाद कहने की आवश्यकता नहीं कि वर्तमान पूँ ीवादी व्यवस्था, सामंतवाद की ही अगली कड़ी है। समा ा के निम्न वर्गों के व्यक्तियों का भरपूर शोषण किया है, उनकी अस्मिता और अस्तित्व दोनों को लूटा है। दूर तक देखा ाए तो कहा ा सकता है कि आम- ान तक पसरा पूँ ीवाद का हमशक्ल बा ारवाद पहले तो आर्थिक विकास का प्रलोभन देकर उन्हें अपनी संस्था का हिस्सा बनाता है फिर एड एवं फिल्मों में काम देकर उनकी अस्मिता को लूटता है और वस्तु के रूप में बदल कर विश्व के अधिसंख्य व्यक्त्यिों के सेक्सुअल भूख को मिटाता है।

इतिहास गवाह है कि स्त्री विषयक कोई भी सवाल आ ा तक खत्म नहीं हुआ। पुरानी समस्याएँ भी आधुनिकता के आवरण में नयी हो गयी हैं। द्रौपदी के ीर हरण की घटना ितनी प्रा ीन है उतनी ही नवीन। आ ा भी समा ा में बलात्कार, महिलाओं को निर्वस्त्र करने तथा मारने पीटने की घटनाएँ अखबार की सुर्खियाँ बटोरती हैं। सभ्यता पुरानी होती है, वि ार पुराने पड़ ाते हैं, ीज़ें पुरानी हो ाती हैं लेकिन स्त्रियों के ीवन से ुड़े सवाल कभी पुराने नहीं होते। गर्भ धारण से लेकर आखरी साँस तक स्त्रियाँ छली ाती हैं। ो ीज़ स्त्रियों को अ छी लगती हैं, वही बंधन बन ाती है, िसके लिए वह ान देती है, वही उसके ान का दुश्मन बन ाता है। प्रेम, प्यार, सहानुभूति, दया, ममता, करुणा की प्रतिरूप स्त्रियों को हिंसा, अमानवीयता, क्रूरता का दंश आ ीवन ेलना पड़ता है। भूमंडलीकरण के इस युग ने स्त्री विमर्श को सामने लाकर भले ही नारी को सशक्त और आत्मनिर्भर बनाया हो, पर इस बात से इनकार नहीं किया ा सकता है कि वे इस आत्मनिर्भरता को प्राप्त करने में ो रकम अदा करती है, वह उनके अस्मिता को क ोर कर रख देनेवाला होता है।

उदय प्रकाश को देश एवं समा ा के विषय में गहरी सम ा है, वे समा ा की छोटी-छोटी एवं बड़ी से बड़ी समस्याओं को बिना लाग लपेट के लिखते हैं। ऐसा लेखन मध्यकाल में कबीर और आधुनिक काल में निराला ही कर सके। भूमंडलीकरण अवस्था में देश और समा ा दो खंडों में विभा ात हो गया। एक खंड में मेट्रो रेल, मेट्रों बसें ालायी ाा रही हैं, बड़े-बड़े मॉल्स खुल रहे हैं। ाौबीसों घंटे लाइट मुहैया करायी ाा रही है और पूरे इस खंड को मेट्रो बनाया ाा रहा है। दूसरा भाग वह है ाहाँ आा ा भी अंधेरा है, स्व छ ाल की अव्यवस्था है, भुखमरी है, गरीबी है, की ाड़ है, ाोपड़ी है। वास्तव में यही भारत है। आा ा इंडिया दैट इ ा भारत के मुहावरे में इंडिया केंद्र में और भारत हाशिये पर। स्पष्ट है इंडिया मेट्रो पोलिटन सिटी का नाम है और भारत अत्यन्त पिछड़े ग्रामीण समा ा का। मोहनदास कहानी में उदय प्रकाश यह दर्शाते हैं कि भारत के भीतर ही भारत का यह विभा ान नई अर्थ नीतियों, उदारीकरण और औद्योगीकरण का ही परिणाम है-"ये सारी घटनाएँ उस समय की हैं ाब 'इंडिया साइन' कर रहा था और वित्त मंत्री तथा विश्व बैंक का दावा था कि सन् 1990 से ाारी 5.8 प्रतिशत की आर्थिक विकास की मौ ाूदा दर अगर इतने ही सालों तक और बनी रही तो इंडिया अमेरिका बन ाायेगा क्योंकि इससे आधी विकास की दर पर प ाास सालों के भीतर अमेरिका अमेरिका बन गया था। ... वही समय ाब दिल्ली में गरीब म ादूरों का ाार साल का पसीना, 19 ह ाार टन फौलाद और 4 लाख 57 ह ाार घन मीटर धरती को खोद कर एशिया का सबसे बड़ा, दुनिया का सबसे महंगा और आधुनिक मेट्रो रेल बनाया ाा रहा था। ाब सा े तीन ह ाार बांधों के लिए पाँ ा करोड़ से यादा आदिवासी और दलितों के घर-खेतीबारी पानी में डुबा दिये गये थे। ाब देश के 20 करोड़ लोगों के पास पीने का पानी तक नहीं था... और साठ करोड़ के पास हगने, नहाने और मूतने की ागह नहीं थी... ाब रा ास्थान के गंगानगर और टोंक के एक द ान गरीब किसानों को पुलिस ने इसलिए गोली ालाकर मार डाला था क्योंकि वे अपनी सूखती हुई फसलों की सिं ााई के लिए पानी मांगते हुए पत्थरबा ाी पर उतर आए थे। ... वही समय ाब पुरबनरा की कठिना नदी का पानी एक कागज़ के कारखाने के लिए लकड़ी

सड़ाने के लिए बांध में बदला ा रहा था और वह सारा हिस्सा पानी में डूब गया था ाहाँ मोहनदास पलिया बनाकर तरबू ा, ककड़ी, खरबू ा, लौकी उगाता था...।"[20] यह पूरा प्रकरण वर्तमान समा ा एवं देश का खौफनाक ोहरा उघाड़ देता है, ि ासमें गरीबों को ग्रीनहंट नाम देकर मिटाया ा रहा है और ाहाँ अब तक गाँव थे उन्हें मिटाकर मेट्रो शहरों में रूपांतरित किया ा रहा है। ऐसी व्यवस्था में एक तबका वह है ाो भूख से कराह रहा है और दूसरा तबका वह है ाो अधिक खा लेने से पेट में गैस बन ाने के कारण कराह रहा है। अर्थात् कष्ट में दोनों हैं पर दोनों के कष्ट में ामीन-आसमान का अंतर है। इस प्रकार उदय प्रकाश अपनी इस लंबी कहानी में वर्तमान समा ा की प्रत्येक समस्याओं का ाय ाा लिया है, ाहाँ अशांति है, भ्रष्टा ाार है, आर्थिक विषमता है, ाोपड़ियों को कु ाल देनेवाले बुलडो ार हैं, आदिवासियों के प्राकृतिक आवास को समाप्त करनेवाली तथा पर्यावरण को प्रदूषित बनाने वाली बड़ी-बड़ी विदेशी नि ाी कंपनियाँ हैं, प्रशासनिक भ्रष्टा ाार हैं, सांस्कृतिक व र्स्व है, बा ाारवाद, मीडिया ागत है। बड़े-बड़े विज्ञापनों एवं पोस्टरों से क ाने वाले छोटे-छोटे गाँव हैं ाहाँ सदैव धुप अंधेरा रहता है। बि ाली के प्रकाश के सामने उनके दिये की लौ कुंद पड़ ाती है। देखिए एक दृश्य-"एक के बाद दूसरी सरकारों की वह आर्थिक नीति, ाो देश के महानगरों को अमेरिका बना रही थी, वहीं देश के गाँवों और पिछड़े इलाकों को कंगाल बनाकर वहाँ असंख्य इथियोपिया, खांडा और घाना पैदा कर रही थी। दिल्ली-लखनऊ, मुंबई-भोपाल, कोलकता-पटना में ाब हर रा ानीतिक पार्टी और वि ाारधारा के प्रोफसेर ाालीस-प ाास ह ाार महीने का वेतन ले रहे थे और मामूली से मामूली फ्रीलांसर तक दो पन्नों की रपट पर पां ा सौ से ह ाार रुपये पा रहे थे, तब गाँवों और छोटे कस्बों में मेहनत मशक्कत का काम करनेवाले मोहनदास ैसे लोगों को ाार सौ रुपये की नकदी ुगाड़ने में महीना लग ाता था।"[21]

भूमंडलीकरण ने देश का नक्शा ही बदल दिया। पहले ाहाँ बड़े-बड़े पहाड़ नदियाँ होती थीं वहाँ बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएँ खड़ी हैं। ाहाँ बड़े-बड़े घने ांगल हुआ करते थे वहाँ बड़ी-बड़ी नि ाी कंपिनयाँ स्थापित हो रही हैं, गाँव का घर अब

रहा कहाँ सरकार उसकी ागह फ्लैट बनवा रही है, गाँव के गाँव समाप्त हो गये, कहना गलत न होगा कि एक दिन छोटे-छोटे देशों का भी यही हश्र होगा, उनका भी नामों निशान दुनिया के नक्शे से गायब हो ााएगा। इस बात की गहरी ि ांता है लेखक को इसीलिए 'घर' शीर्षक कहानी में वह कहता है-"बहुत देर से नक्शे को देख रहा था। फिर उसने वह नदी खो ा निकाली ाो उसके घर के पास से बहती थी। फिर उसने वह पहाड़ भी खो ा निकाला ाो उसके घर से मुश्किल से तीन किलोमीटर दूर था और ाहाँ गर्मियों में वह ाारा तोड़ने ााता था।

यहाँ, इस ागह पर कहीं घर होना ााहिए। उसने नक्शे पर एक ागह पेंसिल की नोक रखी।

तभी उसने ध्यान दिया-नक्शा ि ास देश का था, वह वर्षों पहले खत्म हो ुका था।"[22]

भूमंडलीय वि ाारधारा से निर्मित वर्तमान पूँ ाीवादी व्यवस्था में ि ास लोकतंत्र का विकास हुआ, वह राष्ट्रपति, माफिया और फौ ा के द्वारा लागू किया गया। आ ा का लोकतंत्र परतंत्र में बदल गया है, ह ाारों बेकसूर मार दिये ाा रहे, शासन की कोई ावाबी कार्यवाही नहीं हो रही है, वास्तव में आ ा का लोकतंत्र बिक ुका है। देश के रक्षक ही भक्षक बन बैठे हैं, प्रशासन और पुलिस सुरक्षा और अपने पावर के नाम पर ााने कितने घिनौने कृत्य रो ा किया करती हैं। धन-वैभव के लिए मनुष्य एक-दूसरे का गला काटने पर आमदा है। शिक्षा, प्रशासन, रा ानीति हर ागह भ्रष्टा ाार का बोल बाला है, ऐसे समय को रेखांकित कर भारतेंदु ने बहुत पहले लिखा था-"आवहु रोवहु सब मिलि भारत भाई, हा हा भारत दुर्दशा देखि न ााई आ ा का लोकतंत्र आयात-निर्यात, व्यापार और बा ाार के विकास में यादा व्यस्त दिखाई दे रहा है। ि ास लोक के मत के आधार पर उसका निर्माण हुआ उससे वह बेखबर है। लोकतंत्र के वर्तमान स्वरूप को ि ात्रित करते हुए लेखक अपनी कहानी 'सही उत्तर' में कहता है-"सेना और पुलिस द्वारा ाो ह ाार-डे ़ ह ाार लोग मारे गये, ि ानमें कुछ बू े, ब ो और महिलाएँ भी शामिल थी, उनके बारे में कहा गया कि कुछ भाड़े के खतरनाक अपराधियों को पकड़ लिया गया है, कुछ मारे गये

हैं और देश-भर में यहाँ-वहाँ छिपे बाकी अपराधियों को पकड़ने के लिए सेना का ऑपरेशन ारी है, ुनाव टाल दिए गए और रात में राष्ट्रपति ने टेलीवि ान और रेडियो द्वारा राष्ट्र के नाम संदेश दिया। उसके संदेश का सार यह था कि-"अब आयात-निर्यात, व्यापार और बा ार के विकास के रास्ते से सभी बाधाएँ हटा दी गई हैं। यह इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है। हमने उसे लागू कर दिया है।"[23]

यही वह लोकतंत्र है ि से ' नता का, नता द्वारा, नता के लिए' शासन कहा ाता है। इसी लोकतंत्र के प्रशासनिक सदस्य-पुलिस, पटवारी आदि लोग गाँव एवं कस्बे में ाकर उनके घरों से उनकी मुर्गियाँ उठा ले ाते हैं और ठर्रा बनानेवाले का मटका फोड़ देते हैं। औरतों और लड़कियों की अस्मत घरवालों के सामने लूट लेते हैं, और उनके पेट में अपना हरीला बी छोड़ आते हैं। आ भी वे बा ारू संस्कृति से दूर अपने लोकधुन में मस्त रहनेवाले लोग हैं, लेकिन अब उन्हें बा ार ाने और शासन को मीन सौंपने के लिए म बूर किया ा रहा है। उन्हें पिछड़ा, आदिवासी, दलित आदि ाति सू क नामों से नवा ा ा रहा है। बा ार अब उन्हें अपने कब े में ले रहा है बड़ी तेज़ी से उनके मीनों पर बहुराष्टीय कंपनियाँ कब ा करती ा रही है। उदय प्रकाश इस नव्य पूँ ीवादी व्यवस्था के रेशे-रेशे से परि ित हैं। तभी तो लिखते हैं-"लेकिन िंगर गाँव के आसपास के छोटे-छोटे गाँवों में सन्नाटा था। हाट-बा ार के अलावा आदिवासी शहर-कस्बे की तरफ कम ही रुख करते थे। सरकार के नाम पर वे सिर्फ पुलिस, पटवारी और आबकारी-वालों को ही ानते थे, ो उनके घर में घुसकर उनकी मुर्गियाँ उठा ले ाते थे, ठर्रा बनानेवाला मटका फोड़ देते थे, औरतों-लड़कियों के पेट में अपना बी डाल ाते थे मारते-पीटते थे। सिंदवारी, बोडारी, पोंड़ी, खोड़ा, बकेली, नवनिया आदि तमाम गाँवों के आदिवासी मना रहे थे कि उधर न ाना पड़ता तो अ छा रहता। बोडारी गाँव के मिखना बैगा ने तो कठुरदेई में ाकर .ावा दिया था कि प्रधान मंत्री िंगर गाँव न आएँ।

लेकिन पी.एम. के आने की तारीख और वक्त तो तय था... थानेदार और पुलिस के सिपाहियों ने कहा था, अगर नहीं ाओगे िंगर गाँव तो घर-घर में डंडा

घुसेड़ दिया ाएगा। फिर मत आना नालिश फरियाद करने। ऊँ ी ाति के किसान ामींदार और सेठ साहूकार कह रहे थे। ससुर रह गए बैल के बैल। ंगली साले...। इनके भु य और पिछड़े रहे आने के असली ि म्मेदार ये साले आदिवासी खुद हैं।"[24]

यही वह लोकतंत्र है ि ासमें सियाशी लोग छोटे लोगों का गला घोंट कर उनकी ामीन ाय ाद अपनी कर लेते हैं। बड़े-बड़े नेता शहर के प्रदूषित वातावरण से ब ाने के लिए ग्रामीण इलाकों की ऊँ ी पहाड़ियों पर अपनी गगन ुंबी इमारतें बना रहे हैं। की ाड़, दलदल में सने रहने वाले क्षेत्र, धुप अंधियारा वाली पगडंडिया अब ौड़ी सड़कों में तब्दील हो गई है। सड़क के दोनों तरफ बड़े-बड़े लगे मरकरी युक्त हाइलो ान उन्हें ागमग किए हुए हैं, धीरे-धीरे उनका स्थान देश के नक्शे से गायब हो रहा है। उदय प्रकाश ने इसे बहुत नज़दीक से देखा-परखा है तभी तो वे 'और अंत में प्रार्थना' कहानी में लिखते हैं-"पहाड़ की ोटी पर बना कठबंगला असंख्य मरकरी बल्बों की व ाह से दूर से ही ागमग- ागमग ामक रहा था। पूरे कस्बे का कायाकल्प हो गया था। कोई कह नहीं सकता था कि म छरों, सिगड़ी के धुएँ, लो-वोल्टे ा की बीमार रोशनी और खराब, टूटी-फूटी सड़कों वाला, अपनी सुस्त और पिछड़ी हुई ि ांदगी में साँस लेने वाला यही कस्बा ींगर गाँव है। भारत सरकार का कालेपानी का बदनाम भू खंड।"[25]

इस प्रकार भूमंडलीय व्यवस्था ने सब कुछ बदल कर रख दिया। व्यक्ति इतना स्वार्थी हो गया कि दया, करुणा, ममता ैसे भाव हासिए पर ाले गये। लोग बीमार हैं, है ो, खसरे से ाने ा रही है पर स्वास्थ्य विभाग पर इसका कोई प्रभाव नहीं। इस हकीकत को स्पष्ट करते हुए 'और अंत में प्रार्थना' का वाकणकर अपनी डायरी में लिखता है "उनकी आँखों में कहीं ि ांता या दया के निशान नहीं थे। अगर उनमें से किसी का अपना ब ाा मरा होता तो क्या वे यही व्यवहार करते? क्या मैं स ामु ा आदर्शवादी हूँ? लेकिन ऐसा तो नहीं लगता। अगर दो घंटे के लिए मु ो ीप मिल ाती और मैं कुछ लोगों को मरने से ब ाा लेता, तो इससे सरकार और प्रशासन का क्या अहित होता?

कहीं ऐसा तो नहीं कि ो तंत्र या व्यवस्था यहाँ बनी हुई है, वह अपने आप में एक समानांतर प्रणाली है? वह सिर्फ अपनी ही दुनिया की िंताओं में व्यस्त है। शायद उसका हित ही इसमें ुड़ा हुआ हो तो लोग भूख, गरीबी, महामारी आदि से मरें।

कहीं हमारेदेश में लोकतंत्र का असली अर्थ ानता द्वारा अपनी शत्रु व्यवस्था का ुनाव तो नहीं है?"[26]

'और अंत में प्रार्थना' कहानी में लेखक ने कई मुद्दों को एक साथ उठाया है उनकी कहानियाँ सही मायने में 'छोटे मुँह बड़ी बात' कहती है। स ाई तो यह है कि वे घट रहे यथार्थ को ित्रित करने वाले र ानाकार हैं। इसलिए विषय विविधता दोष न होकर उनका गुण स्वीकार किया ााना ाहिए। आदिवासी ीवन की ो ालक इस कहानी में मिलती है वह शरीर को थर्रा देनेवाली है। उनके नाम पर ो विकास कार्य हो रहा वह उनके लिए 'मील का पत्थर' साबित हो रहा है। विकास के नाम पर उन्हें गुलाम बनाया ाा रहा है, यहाँ पर बात को और स्पष्ट करने के लिए कहानी का यह उद्धरण सामने रखा ाा सकता है-"कभी-कभी यह मूल प्रश्न मु े सो ाने को विवश करता है कि सत्ता और ानता के परस्पर संबंधों में पिछले सौ-डे़ सौ सालों में कितना परिवर्तन हुआ है। ींगर गाँव के आसपास के गाँवों के बू़े आदिवासियों से बात करने पर पता ाला ालता है कि उन्हें पुराना ामाना पसंद था। इसकी मुख्य दो व ाहें थीं कि एक तो तब ांगल इतने नहीं उ ाड़े थे और दूसरे यह कि आदिवासी समा ा में तब सरकार और बाहरी लोगों की इतनी दखलंदा ाी नहीं थी।

आदिवासियों के बी ा धारणा है कि सरकार ने सड़कों का निर्माण ांगल काटकर लकड़ी की ुलाई करने, पहाड़ों से खनि ा संपदा निकालने और आदिवासियों की आज़ादी छीनकर उन्हें परावलंबी और गुलाम बनाने के लिए की गई है। ... अगर सड़कें आदिवासियों के विकास के लिए बनाई गई होती तो उनके पास सड़क पर ालनेवाली कोई न कोई ाीज़ ारूर होती पर ऐसा नहीं है।"[27]

उदय प्रकाश की कहानियों में वर्तमान समा ा में होनेवाले गुणात्मक परिवर्तन को भी लक्षित किया गया है। भूमंडीकरण में ाहाँ हम भूगोल के स्तर पर करीब आ

रहे हैं, वहीं ाति, धर्म, संप्रदाय आदि के स्तर पर लोग एक दूसरे से दूर होते ा रहे हैं। कहना गलत न होगा कि आ ा शिक्षा ागत में ायन ातिगत आधार पर हो रहा है। ाति के आधार पर लोगों का शोषण किया ा रहा है। इतना ही नहीं ाति को सीधे धर्म एवं संप्रदाय से ोड़ा ा रहा है। गु ारात का गोधरा कांड, बाबरी विध्वंस आदि वर्तमान सांप्रदायिकता का अ छा उदाहरण है। इसी संप्रदायिकता की कुछ-एक ालक उदय प्रकाश की विभिन्न कहानियों में देखने को मिलता है-"मु े दिखाई दे रहा है कि हमारे देश में हर रो ा ह ारों हत्याएँ हो रही हैं-नकली दवाओं, ाहरीली शराब, गुंडों और अपराधियों के संगठित गिरोहों, पुलिस द्वारा दमन और सरकार द्वारा गोलाबारी से। इस सबका धर्म और संप्रदाय से कोई लेना-देना नहीं है। एक पूरा भ्रष्ट और अपराधी तंत्र बन ुका है, िासकी हिंसा और लूट के सामने इस ीज़ का कोई मतलब नहीं है कि सामने वाला हिंदू है या मुसलमान या किसी और संप्रदाय का। बंग्लादेश में भी मुसलमानों ने ही मुसलमानों का संहार किया था। ह ारों औरतों से बलात्कार किया था और लाखों मुहा िारों को उनके घर-गाँव से उ ाड़कर खाना बदोश बना दिया था। यह स ा है कि हमारे देश में भी हिंदू किसी और के द्वारा नहीं सबसे यादा हिंदुओं द्वारा मारे ा रहे हैं। डॉ.डी.एन.मिश्रा भी हिंदू थे और हरवंश पंडित भी। ानलेवा नकली दवाइयों के व्यापारी भी हिंदू हैं। हद यह है कि इनमें कई हिंदू राष्ट्र के वि ारक और समर्थक हैं और संघ को धन आदि से मदद देते रहते हैं। .. यह सवाल बार-बार मेरे सामने आ खड़ा होता है कि अगर भविष्य में कभी हिंदू राष्ट्र बना तो वह किस हिंदू का राष्ट्र होगा?"[28]

इस प्रकार हम देखते हैं कि संप्रदायवाद हिंदू-मुस्लिम के भेद को लेकर ालने वाला विवाद मात्र नहीं रह ाता बल्कि वह हिंदू का हिंदू और मुस्लिम का मुस्लिम से भेद का विवाद बन ाता है। सिया-सुन्नी आपस में इसी आधार को लेकर लड़ते हैं। रही बात हिंदुओं की तो हिंदू भी अपने भीतर कई संप्रदाय ातिगत आधार पर पाल रखे हैं।

'दिल्ली' शीर्षक कहानी में लेखक ने साम्रा यवाद की ओट में संप्रदायवाद को भी ित्रित करने का भरपूर प्रयास किया है। इस कहानी में ख्वा ा तकी ो एक

मुसलमान व्यापारी है, खुसरो खान के दिल्ली आगमन पर कहता है कि-"खुसरो खान तो इस्लामी फौ ा लेकर हमें काफिरों से आज़ाद कराने आ रहा है। अब दक्षिण से सारा व्यापार, करोबार हमारे क ो में होगा। यहाँ मुसलमान हुकूमत करेंगे।"[29] खुसरो खान ाब अपनी फौ ा के साथ मालाबार पहुँ ाता है तो ख्वा ाा तकी की अगुवाई में तमाम मुसलमान व्यापारियों और म ाहवियों का स्वागत भी किया ााता है। ाब सभी लोगों ने खा पी लिया तो खुसरो अपने सैनिकों से कहता है कि देखते क्या हो, शुरू हो ााओ-लूटो और मारो। काट डालो। इस प्रकार खुसरो का आंतक समू ो मालावार को तहस-नहस कर देता है। देखिए एक दृश्य-"खुसरो खान की आवाज़ समू ो मालावार में एक कोने से दूसरे कोने तक गूँ ाती रही। इस दफा ऐसी लूट मार आग ानी, ि ाना और वहशियाना काम हुए कि लोग मलिक काफूर दीनारी की लूट को भी भूल गए। मालाबार में रुक ाानेवाला कोई भी व्यापारी या बाशिंदा ऐसा नहीं था, ि ासके घर में एक कौड़ी या एक ावान लड़की ब ाी हो।" ... खुसरो खान फिर मुस्काया और उसने कहा, "तुमको पता होना ााहिए कि दिल्ली सारे हिंदुस्तान को सिर्फ एक आँख से देखती है दिल्ली के लिए सारी रियाया बराबर है। रंग, म ाहब, नस्ल, ाुबान, कोई भेदभाव नहीं। लेकिन ख्वा ाा, याद रखो कि वह एक आँख किसी सूफी औलिया, खलीफा, किसी दानिशवर दरवेश या किसी इन्साफपरस्त हुक्मराँ की नहीं है। वह आँख दर हकीकत किसी लुटेरे या डाकू की है। वह किसी वहशी या हवसखोर ाालिम की आँख है। ख्वा ाा, तुमको पता होना ााहिए कि दिल्ली दौलत मंद लुटेरों की नगरी है। कोई गरीब या दीन-ओ-ईमान वाला आदमी अगर वहाँ रहने की कोशिश करेगा, तो उसका हश्र ऐसा होगा कि उसका हाल देखने-सुनने वालों के ि ास्म के सारे रोएं खड़े हो ााएंगे और ना ाुक दिलो-ओ-दिमाग वाले लोगों के आँसू सूख ााएँगे। दिल्ली में काबिलियत, शराफत, ईमान, मेहनत और हुनर के दम पर रहने की कोशिश करनेवाला शख्स या तो पागल होकर सड़कों पर बदहाल भटकेगा या खुदकुशी कर लेगा या फिर दिल्ली उसको लात मार कर शहर-बदर कर देगी।" ... "ख्वा ाा, उस रात का ालसा शानदार था और दावत बहुत उम्दा। फिर तुम्हारा ाो हाल हुआ है, उसके ालते

मु ो तुम पर रहम भी बहुत आ रहा है। और तुम तो ाानते ही हो कि खुसरो खान ाब किसी पर रहम करता है, तो क्या करता है। इस तरह दिल्ली के खुसरो खान ने मालाबार के ख्वा ाा तकी पर रहम किया। उसने उसकी ाान बख्श दी और सिर्फ नाक-कान काट कर ाला गया।"[30]

इस प्रकार हम देखते हैं कि मुसलमान शासक दूसरे मुसलमान को लूट कर ाला गया। यह भूमंडलीय व्यवस्था का प्रतीक है ि ासमें स्वार्थ परता अपनी ारम सीमा पर है। ख्वा ाा तकी मरने से पहले, देश प्रेम, एकता एवं अखंडता का संदेश देते हुए कहते हैं कि "मैं अपनी आखरी नफस में मरने के ठीक पहले तुम लोगों से तीन बातें कहे ााता हूँ। इन पर अमल करना इससे मेरी रूह को तस्कीन होगी। ... पहली बातः तुम सब आपस में खूब प्यार-मोहब्बत के साथ रहना। हिंदू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी-सभी इंसान हैं और दरअसल वे सब एक ही हैं।

दूसरी बातःअगर किसी खौफ या खतरे का वक्त आए, तो ऐसे में अगर भागना है, तो सब एक साथ भागो और अगर उसका मुकाबला करना है, तो एक साथ मुकाबला करो। कोशिश मुकाबले की करो। यकीन करो, हर लुटेरा अंदर से बहुत बुज़दिल और गिरी ज़ेहनियत वाला होता है1 वह तुमसे हर हाल में आखिर में हारेगा।

कहते हैं कि ख्वा ाा तकी ने मरने से पहले ाो तीसरी और आखिरी बात फुसफुसाते हुए कही थी, वह यह थी कि आइंदा अगर इस इलाके में कोई दिल्ली-दरबार से आए और तुमसे कुछ कहे, वायदे करे, ति ाारती सौदा करे, तरक्की और खुशहाली के वास्ते दिलाए, तो ाुप ााप उसकी बातें एक कान से सुनो और दूसरे कान से निकाल दो और अगर लगे कि उसकी बातों का असर तुम पर होने लगा है, तो उसे अपने दस्तखाने में ले ााओ। उसे उम्दा लज़ी ा ाीज़ें खाने के लिए दो। नरम बिस्तर उसकी खातिर बिछाओ और ाब वह सो ााए, तो उसके सारे कपड़े उतारकर, उसका सिर उस्तरे से मूँड़ कर, गधे पर उलटा बिठाकर उसे बाइ ात दिल्ली के लिए रुखसत कर दो। कहते हैं, इतना कर ख्वा ाा तकी मर गया था।"[31]

इस पूरे ऐतिहासिक क्षेपक का यदि वर्तमान साम्रा यवादी एवं नव्य पूँ ीवादी व्यवस्था से तुलना की ाए तो गलत न होगा। ऐसे में ख्वा ा तकी ने ो सूत्र बतलाए वह कौटिल्य के शासन नीति साम, दाम, दंड, भेद आदि से मेल खाते हैं। बिना इनका पालन किए न तो इस पूँ ीवादी व्यवस्था से अपने को ब ा सकेंगे और न ही साम्रा यवादी नीतियों से अपने राष्ट्र एवं समा ा को। अतः नव्य पूँ ीवादी ताकत से लड़ने के लिए हमें संगठित होना होगा, ाति, धर्म, संप्रदाय की बातों से ऊपर उठना होगा तभी वर्तमान को सुखद और भविष्य को सुरक्षित बनाया ा सकता है।

नव्य पूं ीवादी व्यवस्था की शिकार वर्तमान शिक्षा प्रणाली के स्वरूप को भी लेखक ने 'मोहनदास' और 'आ ार्य की र ाई' कहानी में बखूबी ि ात्रित किया है। उदय प्रकाश ने समा ा एवं राष्ट्र के प्रत्येक कोने को पकड़ कर अपनी कहानियों का ाँ ा तैयार करते हैं यही कारण है कि उनकी र ानाओं में समा ा एवं देश ीवंत रूप में हमारे सक्षम आता है। विनायक दत्तात्रेय एक दलित युवक है ो आ ार्य करकट के निर्देशन में शोध करता है। प ़ने में अव्वल द े का है फिर भी आ ार्य करकट उसे नौकरी में ाने से रोकने का हर संभव प्रयास करते हैं। विनायक दत्तात्रेय वर्तमान सुशिक्षित दलित युवकों का स ीव ि ात्र प्रस्तुत करता है। "लेकिन ैसा कि सब ानते हैं, सुप्रसिद्ध नाटककार और ि ात्रकार विनायक दत्तात्रेय को दोनों आ ार्यों ने कभी कोई नौकरी नहीं मिलने दी। महा आ ार्य कौटिल्य केसरी और आ ार्य करकट यद्यपि एक दूसरे के विरुद्ध ाड़-काटू षड्यंत्र और पृष्ठभूमि निंदा आदि करते रहते थे, परंतु विनायक दत्तात्रेय को नौकरी न मिलने देने के मामले में दोनों के बी ा अमेरिका और इंग्लैंड या भारत और भूटान ैसी एकता थी। दोनों कहते थे-"साला फटी ार पगलेट, बैं ाों ीनियस बना फिरता है। घुटने टिकवाकर महरौली रोड की गिट्टी में ाब तक नाक नहीं रगड़वा लेंगे, नौकरी नहीं मिलने देंगे।"[32]

यह दंश विनायक दत्तात्रेय को गरीब होने के कारण ोलना पड़ता है। यही दशा मोहनदास की भी होती है। इन दोनों पात्रों की संगति वर्तमान शिक्षा प्रणाली में दलित एवं गरीब किंतु योग्य छात्रों के साथ बखूबी बैठती है। एक अन्य कहानी

'असत्य का भौतिक प्रमाण' में यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि शासन, शिक्षा, समा ा के नियम कानून को बनाने वाले कौन होते हैं, और इन नियमों को तोड़नेवाले कौन हैं। कहानी का पात्र विनायक दत्तात्रेय कहता है-"मैं एक दिन यह पता लगा के रहूँगा कि यह नियम किसने बनाया, अंग्रेज़ों ने, मुगलों ने, ब्राह्मणों ने, सामंतवाद ने, लोकतंत्र ने, समा ावाद, नौकरशाही या ईश्वर अथवा शैतान ने? उन्होंने यह भी अपनी डायरी में लिख रखा था। हालाँकि विनायक दत्तात्रेय बहुत योग्य, कर्मठ और ईमानदार अफसर थे, लेकिन वे सरकार में लगातार विवादग्रस्त और संदिग्ध होते ाले गए। ... इन्हीं दिनों एक अखबार में संस्कृति विभाग में व्याप्त भ्रष्टा ार, अनियमितता और भाई-भती ावाद के बारे में हर रो ा नियमित लेख आने लगे... वे लेख बहुत तथ्यपरक, सनसनी खे ा, वि ारोत्ते ाक, प्रामाणिक और साहसिक होते।

विभाग में अफरा तफरी म ा गई। बॉस ने मीटिंग में कहा, यह काम कोई ऐसा आदमी कर रहा है, ि ासे विभाग के बारे में बहुत सारी ानकारियाँ हैं...। परंतु ैसा रा ानीतिक और प्रशासनिक ानतंत्र हमने इन प ापन सालों में विकसित किया है, उसमें ऐसे आदमी से खतरनाक कोई नहीं हो सकता... सरकार की विश्वसनीयता और हमारे विभाग से ुड़े बौद्धिकों की गरिमा और प्रतिष्ठा को ब ाये रखने के लिए इस आदमी का तत्काल पता लगाया ाना ाहिए।"[33]

इस प्रकार हम देखते हैं कि यह विभागीय भ्रष्टा ार वर्तमान विभागीय भ्रष्टा ार से शत फीसदी मेल खाता है। वर्तमान शासन व्यवस्था, कुव्यवस्था की वाहक बन गयी है। ाहाँ ूठ, लूट, घूस, फरेब का बोलबाला है। यह शासन व्यवस्था भारतेंदु युगीन 'अंधेरनगरी' से काफी हद तक मेल खाती है।

भूमंडलीकरण का एक और भयावह ेहरा पूँ ीवाद है यह ि ास ि ास को काटता है वह ब ाता नहीं पूं ीवाद सारा खेल बा ार के माध्यम से करता है। स्त्रियाँ यादा महत्वाकांक्षी होती हैं इसलिए इस ाल, फरेब में वह आसानी से फंस ाती है। ग्रामीण इलाकों से शहरों में ाकर छोटे-छोटे काम करनेवाली महिलाएँ धन-उपा ानि के लिए कैसे दलालों के ुंगल में फँस ाती हैं कहने की ारूरत नहीं,

असल खेल तब शुरू होता है ाब उन्हें अ छी नौकरी का ाँसा देकर देह व्यापार में केल दिया ाता है। एक ऐसा दलदल िसमें ाने के बाद कोई ाहकर भी नहीं निकल पाता। यह कैसा धंधा है। धंधे में रहते हुए समस्त समा । यहाँ तक कि दुनियाँ भर के भले-मानस लोग उसका आदर करते हैं, सम्मान देते हैं। पर ैसे ही कोई लड़की धंधे से बाहर आकर किसी व्यक्ति को स्वे छा से अपना बनाना ाहती है सारा समा । उसे अछूत, त्या य सम ने लगता है। वही व्यक्ति ो कुछ दिनों पहले उसके साथ हमबिस्तर हुआ करता था, बाद में वह उससे रास्ता बेराकर ालता है कि कहीं वह रास्ते में न आ ाए। 'दिल्ली की दीवार' कहानी की पात्रा फूलो, सोमाली, सलीमन कैसे वेश्यावृत्ति में फंस ाती है इसका खुलासा कहानी का यह अंश करता है-"सोलहवीं सदी के उसी खंडहर में रा ावती की बहन फूलो, आ ादपुर स ी मंडी के निकास फाटक पर मूँगफली बे ेनेवाले ागरा । की पत्नी सोमाली और लाल किले के आसपास ारस बे ेनेवाले मुस्ताक की फुफेरी बहन सलीमन, ो अब उसकी पत्नी भी थी, रहती थीं। वे तीनों धंधा करती थीं। सोमाली तो खंडहर में ही रहकर वहाँ अक्सर आ ाने वाले स्मैकिए-तिलक, भूसन और आ ाद के लाए हुए ग्राहकों को निपटाती थी लेकिन सलीमन और फूलो शाम को रिक्शा लेकर सड़क पर ग्राहकों की खो । में भी घूमती थी। फूलो कभी-कभी 'पार्टी' में भी रात-रात भर के लिए बाहर ाया करती थी।

फूलो कभी-कभी आज़ाद के साथ सोती भी थी, हालांकि इसके लिए उसकी बहन रा ावती और बहनोई गुलशन ने मना कर रखा था। घर के लोगों के साथ न धंधा, न उधारी-यह गुलशन कहा करता था। गुलशन, रा ावती और फूलो इस खंडहर के निवासियों में सबसे अमीर थे और पिछले साल भर से, ाब से फूलो गाँव से यहाँ रहने आ गई थी और धंधा करने लगी थी, उनकी कमाई इतनी ब ़ गई थी कि वे लोनी वार्डर की तरफ घर बनाने के लिए प्लॉट देखने कई बार ा ुके थे।"[34]

उपर्युक्त पंक्तियाँ यह दर्शाती हैं कि गरीब लोग शहर की ाका ौंध में पहुँ ाते ही ुधियाँ ाते हैं। ाल्द से ाल्द अमीर बनने की ाहत उन्हें गलत दिशा

में कदम उठाने के लिए म ाबूर करते हैं। यह एक अलग प्रकार का भूमंडलीकरण है ाो अदृश्य और गोपनीय तरीके से हो रहा है। आ ा स्थिति इतनी भयावह है और उपभोक्तावादी संस्कृति लोगों पर इतनी हावी है कि भौतिक संसाधनों के सुख-भोग हेतु ाने कितनी प ़ी लिखी लड़कियाँ काल गर्ल का काम कर रही हैं। भूमंडलीकरण वाले अध्याय में हम दिखा आये हैं कि लड़कियाँ अपने आर्थिक विकास के लिए अपने शरीर को ही सी ़ी बना ली हैं। आये दिन किसी-न-किसी होटल, रेस्टोरेंट में लड़कियाँ धंधा करते हुए पकड़ी ाती हैं। इनमें अधिसंख्य भाग कुलीन कहे ानेवाले उ ा खानदान की लड़कियों की होती हैं। पर यह बात निराधार नहीं अब इस ग्लैमर में आम लड़कियाँ भी फँसती ा रही हैं। इस प्रकार लेखक ने नारी ीवन पर पड़नेवाले भूमंडलीय प्रभाव को बड़ी ही सूक्ष्मता के साथ ि ात्रित किया है।

उदय प्रकाश की र ानाओं का प्रकाशन 1980 से प्रारंभ होता है। 1980 के बाद हमारे समा ा में व्यापक बदलाव आए हैं। 1991 में रूस का विघटन होता है। पूराविश्व एक ध्रुवीय होता है1 1991 के बाद ही भारत में उदारीकरण का दौर आता है, सू ाना क्रांति आती है। 1984 में हिंदू सिक्ख दंगा होता है। 1992 में बाबरी मस् ाद विध्वंस कांड होता है। ि ासके बाद सांप्रदायिक विद्वेष का माहौल छा ाताहै। समा ा में एक भय का वातावरण छा ाता है।

सारे बदलावों में ाो सबसे अधिक प्रभावित बदलाव है वह है सू ाना क्रांति का आना, उदारीकरण। हम ि ास भारतीय समा ा के यथार्थ की बात किया करते हैं। सर्वत्र एक ैसा नहीं है। कोई खूब अमीर हो रहा है तो कोई बहुत गरीब, कोई आलीशान बंगला में रह रहा है तो कोई उसी बंगला के सामने पुटपाथ पर। किसी के पास अथाह धन, वैभव है तो कोई पैसे न होने की व ाह से, क र्ा न ाुका पाने की व ाह से आत्महत्या कर रहा है। उदारीकरण के कारण अमीरी और गरीबी के बी ा की खाई बहुत ाौड़ी हुई है।

उदय प्रकाश ने रमेश उपाध्याय के साथ साक्षात्कार में यथार्थ के बारे में लिखते हैं-"ि ास भारतीय समा ा के यथार्थ की बात किया करते हैं, वह सर्वत्र एक ैसा नहीं है। शहरी और ग्रामीण यथार्थ तो भिन्न है ही, ग्रामीण यथार्थ में भी बड़ी

भिन्नता और विविधता, उनमें से किसी एक यथार्थ को बड़ा मॉडल नहीं बनाया ा सकता, ैसे नार्थ ईस्ट के गाँवों के लोग कृषि से पहले की सी अवस्था में ी रहे हैं, ाबकि हरियाणा और पं ाब में खास तौर से हरित क्रांति के बाद कृषि का व्यवसायीकरण हो ुका है। यहाँ के गाँवों में ो अंतर्विरोध है वे बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश और रा ास्थान के गाँवों के अर्द्धसामंती नहीं बल्कि पूँ ीवादी अंतर्विरोध है। गाँवों का शहरी करण भी हो रहा है।"[35]

वर्तमान समय में बहुत तेज़ी से बदलाव आया है और बहुत सारे लोग ि न्हें हम 10-15 साल पहले ानते थे ैसे पंडित, धोबी, नाई, कुम्हार, कहार, माली, मो ी, ब ़ई, लुहार तथा दूध देने वाला, सब ी वाला, स्तरी करनेवालों का हमारे घरों में लगातार आना ाना लगा रहता था। हमारे परिवार उनके परिवार से ुड़े रहते थे। पहले की कहानी में सह ा ही देखा ा सकता है कि मध्यवर्ग के पात्रों का ऐसे गरीब मेहनतकश पात्रों से संबंध और संपर्क है। नयी टेक्नोलॉ ी ने न केवल इस तरह के व्यवसाय को बंद किया बल्कि इस तरह के संबंधों को भी समाप्त किया है। वॉशिंग मशीन आ ाने से धोबी की ारूरत समाप्त हो गयी, दूध का पैकट बा ार में आने के कारण दूध देने वाला गायब हो गया। ऐसे बहुत सारे लोग पहले ि न्हें हम बहुत नज़दीक से ानते थे वे अब हमारे घरों, शहरों और गाँवों एवं गलियों से गायब होते ले गये। इस परंपरागत, पारिवारिक परस्परता के बिखरने का प्रभाव न केवल अन्य वर्तमान कहानीकारों की कहानियों पर पड़ा बल्कि भूमंडलीय व्यवस्था के सबसे बड़े हस्ताक्षर उदय प्रकाश की कहानियों पर भी पड़ा है। मैंगोसिल, मोहनदास, वारेन हेस्टिंग का साँड आदि कहानियों में इतिहास के आवरण में वर्तमान को देखने-सम ाने की कोशिश की गयी है। ठीक उसी प्रकार ैसे धर्मवीर भारती के नाटक अंधायुग में।

'मैंगोसिल' कहानी में भी लेखक ने भूमंडलीकरण के साथ विकसित हो रहे उन्नति और प्रगति के इस मॉडल को अस्वीकार किया है ो समा ा में केवल एक ही वर्ग की संपन्नता व समृद्धि को पोषित करता है। उदय प्रकाश का मानना है कि यह एक सामाि ाक प्रपं ा है। शहरों के किनारे बसी गंदी बस्तियों के धूल-धुएँ में साँस

लेते लोगों की किसी प्रशासन को िंता नहीं। इन लोगों को परिदृश्य से पूरी तरह अनुपस्थित रखने की कोशिश ारी है। इतिहास के अलग-अलग पड़ावों पर यह वर्गीय ेतना रूप बदल कर दमन और उत्पीड़न की नयी कहानियाँ र ाती रही है। ‘मैंगोसिल’ में लेखक ने सूरी के माध्यम से टिप्पणी की है-"अंकल अब तीसरी दुनिया नहीं है। दो ही दुनिया है और वो हर ागह है। एक दुनिया वह िसमें अन्याय करने वाले लोग हैं दूसरी दुनिया वह िसमें अन्याय सहने वाले लोग हैं।"[36] इस प्रकार वे इस कहानी में वर्तमान सामा िक विकास के इस मानवीय ाँ े को अस्वीकार करते हैं। इस बदलाव को इस टिप्पणी से सम ा ा सकता है-"और यह किस्सा अभी का है। इसी समय का। अभी हाल फिलहाल की तारीखों का। ... आप क्या सो ते हैं? सन् दो हज़ार तीन में अफगानिस्तान, इराक, बोस्निया में ो हुआ था, या बीसवीं सदी के मध्य में हिरोशिमा-नागासाकी, कोरिया-वियतनाम में ो कुछ हुआ, या ईसा से दो- ाई ह ार वर्ष पहले मोहन ोदड़ो, हडप्पा या मेसोपोटामिया में ो हुआ या अभी इन पंक्तियों के लिखे ाने के पल कर्बला, बगदाद, फ ुल्ला, न फ, नसीरिया या गा ीपट्टी में ो हो रहा है, क्या वह दिल्ली के गुडगाँव, नोएडा, सीलमपुर, भिलसवा, रोहिणी, ियासराय, महरौली में ो हो रहा है, उससे भिन्न है? या नर्मदा, सोन बेतवा, कृष्णा-कावेरी, दल ा, यांग्तशी, अमे ॉन, वोल्गा, मिसीसिपी, ांवे ी, थेम्स, नील, सिंधु, गंगा, तुंगभद्रा, कोसी, गंडक आदि तमाम नदियों की घाटी और तटों पर ो हो रहा है, उससे भिन्न है?"[37]

इस प्रकार देखा ा सकता है कि ऊपर दी गई समस्त सू नाएँ इतिहास से संबंध रखती हैं पर फैंटेसी में इसके स्वरूप पर वि ार किया ाए तो वर्तमान सामा िक एवं देश की स्थिति का यथार्थ ित्र प्रस्तुत करती है। उदय प्रकाश इतिहास के प्रत्येक शब्द और वाक्य और उनके बी के ागहों और सन्नाटे में से कहानी का सूत्र निकाल कर लाते हैं। वे आगे इस कहानी के अंत में एक सपोटिंग एवीडेंस की तरह हवाला देते हुए कहते हैं-"न केवल तीसरी दुनिया के गरीब देशों बल्कि अमेरिका फ्रांस, ब्रिटेन आदि विकसित और अमीर देशों में ऐसे ब े लगातार न्म ले रहे हैं और ब़ रहे हैं िनका सिर ते ी से बड़ा होता ा रहा है।

इन बड़े होते ाते सिर वाले ब ों की विशेषता यह है कि इनका दिमाग सब कुछ ानता है। वे ब ों की तरह अबोध और मासूम नहीं हैं। और यह कि इन ब ों के सिर के भीतर स्थित मस्तिष्क की उम्र उनकी स्वाभाविक उम्र से कई गुना यादा बड़ी है। उस मस्तिष्क में कई शताब्दियों की ैविक स्मृतियाँ मौ ूद हैं। यह एक तरह से अब तक के इतिहास का एक माइक्रो प्रिंट उनका डी.एन.ए. अ ीब तरीके से एक ैसा है।"[38]

इस ऐतिहासिक तथ्य की कथात्मक परिणति यह है कि-"इस समय सभी देशों की सभी सरकारों को इन बड़े सिर वाले ब ों पर निगाह रखनी होगी। क्योंकि वे गरीब घरों में गंदगी और कुपोषण के बी । पैदा हुए हैं। उनकी आँखें ींटियों की तरह लाल हैं। और उन्हें नींद लगभग नहीं आती। और यह भी कि वे सब कुछ ानते हैं!!"[39] इसकी और गहरी मूर्त कथात्मक परिणति हम सूरी की विभिन्न गतिविधियों और मुद्राओं में देखते हैं। उदय प्रकाश ने यहाँ सूरी को आने वाले समय में तीसरी दुनिया के बी । से पूँ ीवाद, साम्रा यवाद व अन्य आतातायी और शोषक शक्तियों के खिलाफ उठनेवाले प्रतिरोध के प्रतिरूप की तरह प्रस्तुत किया है। वर्तमान पूँ ीवादी व्यवस्था एक गलाघोंटू व्यवस्था है िसके बारे में सब कुछ ान लेना स्वयं से दुश्मनी ठान लेने के समान है। मोहनदास कहानी में मोहनदास शासन व्यवस्था के भ्रष्टा ार के बारे में सब कुछ ानता है फिर भी उसका विरोध खुलकर नहीं कर पाता है। शासन व्यवस्था के सामने वह असहाय और ला ार है। कहानी में उसकी अभिव्यक्ति महात्मा गाँधी के रूप में हुई है पर वह वर्तमान दलित, पीड़ित, बेगार व्यक्ति का प्रतिरूप यादा नज़र आता है। अपनी ला ारी को व्यक्त करते हुए वह कहता है-"बस मु े ैन से िंदा रहने दिया ाये। अब हिंसा मत करो। ो भी लूटना है लूटो। अपने-अपने घर भरो। लेकिन हमें तो अपनी मेहनत पर ीने दो।"[40]

इस कथन की अंतिम पंक्ति किसी सम ौतावादी व्यक्ति की पंक्ति नहीं बल्कि 'कर्म प्रधान विश्व करि राखा' वाला कर्मठ व्यक्ति मोहनदास की ला ारी की पंक्ति है।

भूमंडलीकरण के और भी कई ोहरे उनकी कहानियों में देखने को मिलते हैं। ‘छप्पन तोले का करधन’ एक स्वप्न कथा है िसे यथार्थ के आलोक में देखा परखा गया है। पुरानी पी ़ी के प्रति उपेक्षा भाव दिखाकर, परम्परा को नकारा गया है। "दादी हमारे घर की शत्रु थी।"[41] दादी के पास वास्तव में कुछ नहीं था, पर वे ानती थीं कि धन का लाल ा ही एक ऐसा रास्ता है िससे हमें ताउम्र भो न नसीब होगा। परिवार के लोग भी इस भूमंडलीय व्यवस्था में इतना स्वार्थी हो गया है कि वे सिर्फ अपना ही हित ाहते हैं। गड़े हुए धन के लाल ा में वे दादी की सेवा करते हैं, भो न देते हैं। नव्य पूँ ीवादी व्यवस्था का पूरा ित्र इस कहानी में देखने को मिलता है िसमें प्रत्येक वस्तु तब अनुपयोगी हो ाती है ाब वह लाभ देना बंद कर देती है- "तुम सब लोगों ने माँ ी को दुश्मन बनाया है। मु ो तो डर लगता है कि अगर मैं बू ़ा और बीमार हो गया तो इस घर में मेरे साथ क्या किया ायेगा। मैं अभी से बता दूँ कि मेरे पास नहीं है कोई धन। अपना खून बे ाकर मैं तुम सबको पाल रहा हूँ मु ा पर रहम करना... एक दिन पिता ी ने कहा था-कोई करधन-वरधन है नहीं। सब ग ़ंत है। मेरे पिता (दादा ी) कहीं रंगून ार्मनी नहीं गये। पता ला है कि वे कलकत्ते में ईंट के भट्ठे में काम करते थे। माँ तो न्म से तंबाकू खाती थीं। लत ऐसी ीज़ होती है कि अगर करधन होता तो सोना बे ाकर वे तंबाकू मँगवातीं। सब ूठ है, कोई करधन नहीं है कहीं।"[42]

इस प्रकार यह कहानी वर्तमान समय की धन लोलुपता का ित्र खीं ाती है। धन के लिए रक्त का संबधं रखनेवाले बेटा, बेटी, पति सभी गैर हो ाते हैं। मौका पाते ही गला दबाने के लिए तैयार रहते हैं। यह कहानी वर्तमान में घट रही अमानवीय संवेदना को भी व्यक्त करती है।

‘भाई का सत्याग्रह’ कहानी में लेखक ने बड़ी बारीकी से वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टा ार को उ ागर किया है। आ ा की शासन व्यवस्था एवं सत्ता उन्हीं का सहयोग करती हैं िनके पास शक्ति एवं सोर्स दोनों हों। यह स्थिति सिर्फ सरकारी संस्थाओं में ही नहीं अर्द्धसरकारी संस्थाओं में भी निरंतर बनी हुई है- "वह लगभग आठ ब े रात वापस घर लौटा। पत्नी को खाने के लिए मना करके

ुप ाप लेट गया। पिछले पाँ ा सालों से उसने कोई ठीक-ठाक नौकरी पाने की कई कोशिशें की थीं। लेकिन उनकी डिग्री और अनुभव के तमाम प्रमाण पत्रों की अब कोई कीमत नहीं ब ाी थी। सारी नौकरियाँ, सिफारिश, रिश्वत और रा ानीतिक संपर्क के द्वारा मिलती थीं। वैसे भी सरकारी और अर्द्ध सरकारी संस्थाओं में उसके ैसे व्यक्ति के लिए अब कोई गुं ााइश नहीं ब ाी थी।"[43]

इस प्रकार कहानी का यह अंश वर्तमान शिक्षण संस्थाओं से उत्तीर्ण एम.बी.ए., इं ािनियर्स तथा एम.सी.ए. आदि बड़ी-बड़ी डिग्री धारी छात्रों के ािवन का यथार्थ खोलकर रख देती है।

भूमंडलीय व्यवस्था में विकास एवं परिवर्तन की गति इतनी तेज़ होती है मानों प्रति दिन एक युग बीत रहा हो। बा ार में आ ा दिखनेवाली ाीज़ कल पुरानी हो ाती है, परसों उसी वस्तु का नया, आकर्षक लुभावना लगनेवाला मॉडल बा ार में आ ाता है। इस प्रकार प्रत्येक दिन हमारा समा ा एक नया आकार ग्रहण करता है। 'पाल गोमरा का स्कूटर' कहानी में लेखक भूमंडलीकरण के समा ा पर पड़नेवाले व्यापक प्रभाव को व्यक्त करते हुए लिखता है-" ारों ओर परिवर्तन की रफ्तार बहुत तेज़ थी। दिल्ली के लाइडोस्कोप बन ाुकी थी। लाखों प्रकार के साबुन, हज़ारों टूथपेस्ट, करोड़ों घड़ियाँ, हज़ारों कारें, ााँघिए, क्रीम, ब्रेसरी, डिल्डो, सैनिटरी-नैपकिंस, सी.सी., राइफलें, रिमोट, कॉस्मेटिक, लक ारी कंडोम, ट्रैंक्लिाइस र, टेलीफोन, फैक्स, मसा ा सेंटर्स, ि ाम्स...

सरकारें बनती और गिर ातीं। कोई प्रधानमंत्री बनता, फिर या तो गिरा दिया ाता या मार दिया ाता। लोगों की स्मृति उस कैसेट की तरह थी, ि ासमें हर रो ा नई छवियाँ और नई आवाज़ें टेप की ातीं और रात में उन्हें पोंछ दिया ाता। सुबह वे सबके सब स्मृतिहीन हो उठते। उन्हें पिछला कुछ याद नहीं रहता था।"[44]

नव्य पूँ ाीवादी व्यवस्था समा ा की र ाना आर्थिक दृष्टि से करती है। वह व्यक्ति ि ासके पास धन नहीं है वह इस बिरादरी का सदस्य नहीं बन सकता। 'छप्पन तोले का करधन' कहानी की दादी का कहना है कि घर परिवार समा ा एवं राष्ट्र में बने रहने के लिये पूँ ाी का होना बेहद ारूरी है। पूँ ाी से परिवार का प्रेम खरीदा ाा

सकता है, पूँ ी से मरणासन्न अवस्था तक भो ान-पानी से लेकर खिदमतदारी तक खरीदी ा सकती है। धन लोलुपता ने मनुष्य को कितना संवेदनहीन बना दिया उसका ित्र इस कहानी में देखने को बखूबी मिलता है-"मैंने अपने तीनों छौंनों को किस-किस तरह से पाला-पोसा, तुम दोनों भाइयों को प ़ाया। ार तोला सोना ब ा था, िसे मैंने दोनों बहुओं को बराबर-बराबर बाँटा। और तिस पर भी तुम सबने मिलकर मेरे साथ ो किया है बेटा, उसे भगवान ही नहीं, सारा गाँव देख रहा होगा। दादी रोने लगी थी, फिर कहा था-अभी तो बेटा, बहू दाल-भात ड्यो ़ी पर रख ाती है, करधन मैंने दे दिया तो फिर कौन सी आस रह ाएगी? करधन हो कि न हो, वह मेरे लिए और तुम सब की आस के लिए ारूरी है बेटा।"[45]

वैश्वीकरण ने सही मायने में ाहाँ बहुत सारी संभावनाओं को सुगम बनाया है, वहीं एक ऐसी बा ारू संस्कृति का व र्स्व ब ़ा है िसमें आस्थाएँ, मान्यताएँ, विश्वास, अनुराग, लगाव, सब खत्म हुए हैं। ो सबसे बड़ी बात हुई वह ऐतिहासिकता का ह्रास। यह युग विघटन का युग है िसमें परंपरा खतरे में है। 'छप्पन तोले का करधन' में दादी परंपरा का प्रतीक है, िसको न केवल समा ा के लोग अपितु घर-परिवार के सदस्य भी समाप्त करने पर तुले हैं-"बुि ़या अमर घुट्टी पीकर आई है, इतनी आसानी से नहीं ायेगी।"[46]

दादी को मिटाने का लोभ एवं लाभ ही तो पूँ ीवादी सभ्यता की देन है। इसी लोभ वृत्ति ने मनुष्य को संवेदन हीन बना दिया है। घर गिरना, परंपरा के ह ाने का प्रतीक है। उदय प्रकाश की पैनी दृष्टि परंपरा के महत्व को बखूबी पह ानती है इसीलिए लेखक दादी के साथ खड़ा दिखाई देता है।

भूमंडलीकरण के दोषों को पकड़ने और उसको वाणी देने के लिए लेखक ने अपनी कहानियों में फंतासी शैली का प्रयोग किया है। उदय प्रकाश की कहानियाँ कई बार सामाि क समस्याओं का ित्रण स्वप्न शैली में करती हैं। 'तिरिछ' कहानी इसका अ छा उदाहरण है। इस कहानी की विडंबना यह है कि कोई भी रामस्वारथ की मौत नहीं ाहता था। हर कोई उसकी मदद ही करता, अगर वह उनकी स्थिति सम ा ाता। लेकिन ऐसा नहीं हो सका। लोगों ने अपने अविश्वास के कारण रामस्वारथ

के साथ वैसा सलूक किया, ैसा तिरिछ सपने में अपने ब ो के साथ करता। कहानी का अंत भी फिर तिरिछ के उसी सपने पर होता है-

"वह भूरी ट्टान... तिरिछ की लाश उसके ऊपर पड़ी हुई है। मु े एक बेतहाशा खुशी अपने घेरे में ले लेती है। आखिर वह मारा गया। मैं पत्थर लेकर तिरिछ को कु लने लगता हूँ, ोर- ोर से उसे मारता हूँ... तभी अ ानक कहीं, मैं पाता हूँ कि मैं उस ट्टान पर नहीं हूँ। ...वहाँ कोई ंगल नहीं है बल्कि मैं दरअसल शहर में हूँ। ... मेरे गालों की हड्डियाँ निकली हुई हैं। ... मु े प्यास लगी है और मैं बोलने की कोशिश करता हूँ। शायद मैं बकेली, अपने घर आने का रास्ता पूछना ाहता हूँ और तभी अ ानक ारों ओर शोर उठता है। ...घंटिया ब ने लगती हैं... मैं भागता हूँ। ... मैं पास-पास कदम रखकर अ ानक लंबी-लंबी छलाँगें लगाता हूँ, उड़ने की कोशिश करता हूँ। लेकिन भीड़ लगता है हमारे पास पहुँ ने वाली होती है। एक अ ीब-सी गर्म और भारी हवा मु े सुन्न कर देती है। अपनी हत्या की साँसे मु े छूने लगती हैं... और आखिरकार वह पल आ ाता है ब मेरे ीवन का अंत होने वाला होता है...।"[47]

इस तरह पूरी कहानी में एक स्वप्न लता रहता है। सपना पूरी तरह से टूट नहीं पाता, क्योंकि सपने की व ह, वह अंधविश्वास और अविश्वास का आतंक है- िसे इतनी ल्दी तोड़ा नहीं ा सकता। छोटे-छोटे वाक्यों के रिए, एक-एक छोटा-छोटा अनु छेद देकर कहानीकार उस भय और आतंक के वातावरण को गहरा करने में सफलता प्राप्त करता है।

उदय प्रकाश की कहानियों की एक मुख्य प्रवृत्ति ादुई यथार्थवाद है। ादुई यथार्थवाद का मूलाधार फैंटेसी है। यद्यपि ादुई यथार्थवाद को लेकर हिंदी कथा साहित्य में अनेक कहानियाँ लिखी गयीं िनमें मुक्तिबोध की 'क्लॉड ईथरली', 'ब्रह्म राक्षस का शिष्य', परसाई की 'भेड़ें और भेड़िये', रमेश उपाध्याय की 'कामधेनु' प्रमुख हैं। पर उदय प्रकाश का अपना ादुई यथार्थवाद इनसे भिन्न है। उनका ादुई यथार्थवाद न केवल वर्तमान की समस्या को ित्रित करता है वरन् भविष्य की िंता का ित्र भी खीं ता है। उदय प्रकाश की 'टेप ू', 'तिरिछ', 'छप्पन

तोले का करधन', 'मैंगोसिल', 'मोहनदास', 'छतरियाँ' सरीखी कहानियाँ ादुई यथार्थवाद के अंतर्गत आती हैं।

'तिरिछ' में वास्तविक तिरिछ की नहीं, बल्कि उसके संबंध में प्र ालित विश्वासों या अंधविश्वासों के कारण क्रूरतापूर्वक मार दिये ाने वाले आम आदमी की कहानी कही गयी है, िसकी विडंबना यह है कि वह अपनी हत्या को एक लंबा दुःस्वप्न सम ता रहता है और उससे ागकर बाहर आने के प्रयास में मारा ाता है। इस प्रकार तिरिछ एक भयावह फैंटेसी बन ाता है िससे आ के अमानुषिक नगर ीवन का यथार्थ व्यक्त होता है।

'मैंगोसिल' कहानी में सूरी के माध्यम से ादुई यथार्थवाद की सृष्टि की गयी है तो 'छप्पन तोले का करधन' में 'छप्पन तोले की करधन' से। 'टेप ू' कहानी में 'टेप ू' के माध्यम से लेखक उस अनकहे सत्य को प्रकाश में लाया है िसे ानते हुए भी समा अन ान बना हुआ है। 'टेप ू' उन ब ों का प्रतीक है ो लावारिस है। समा की घिनौनी हरकतों का परिणाम है िन्हें अपने अस्तित्व के बारे में कुछ भी पता नहीं। 'टेप ू' हर समा में, हरदेश में हर युग में पाये ाते हैं।

उदय प्रकाश की कहानियों में समा का ाँ ा प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त हुआ है। तिरिछ के रूप में वर्तमान शासन व्यवस्था की अमानवीयता व्यक्त हुई है तो 'छप्पन तोले की करधन' में दादी के घर का गिरना पूँ ीवादी व्यवस्था के विकास का सू क हैं हाँ समा के दलित तबकों के ुग्गी ोपड़ियों को गिराकर बड़े-बड़े माल्स बनाये ा रहे हैं। व्यक्ति का मिटता अस्तित्व 'घर गिरने' का पर्याय है।

'मैंगोसिल' कहानी में सूरी का ब .ता सिर इस बात का प्रतीक है कि पूँ ीवादी समा व्यवस्था के समक्ष गरीब लोगों के ब े दिमाग से तेज़ होने के बाव ूद भी शिक्षा नहीं प्राप्त कर पा रहे हैं।

'मोहनदास' कहानी का पात्र मोहनदास वर्तमान गरीब शिक्षित बेरो गार का प्रतीक है िसे नौकरी करने का कोई अधिकार नहीं, क्योंकि वह गरीब है, दलित है, और शिक्षित है क्योंकि उसके पास कोई सोर्स सिफारिश नहीं है-"असली मोहनदास वही था, िसे नौकरियाँ इसलिए नहीं मिलती थीं क्योंकि उसके पास कोई सिफारिश,

संपर्क, तिकड़म और घूस के लिए रुपये नहीं थे। वह किसी गिरोह या माफिया का सदस्य नहीं था। क्योंकि वह उस ाति और वर्ग का नहीं था, ि ान ातियों-वर्गों के पास ताकत थी।"[48]

'राम स ीवन की प्रेमकथा' का मुख्य पात्र राम स ीवन अत्यन्त गरीब छात्र का प्रतीक है ि ासे प्रेम, मोहब्बत करने का कोई अधिकार नहीं।

उदय प्रकाश ने अनेक नए-नए प्रतीकों और बिंबों के सहारे अतीत, इतिहास, परंपरा और वर्तमान का यथार्थ खोलकर रख दिया है। 'छप्पन तोले का करधन' कहानी का शीर्षक स्वयं एक प्रतीक है। इस कहानी के भीतर तो मानों प्रतीकों की भरमार हो, ऐसे ही प्रतीक है- ा ी के दिल पर लकड़ी का क्रास, टोना-टोटका ादू का उलट ाना या असमी कु ाड़िन द्वारा ा ा को बकरा-बैल, भेड़ बनाना या बू ़ ा गिद्ध, कं ी बिल्ली आदि। ये प्रतीक कहानी को संशिष्ट बनाते हैं और उसकी भाषा भी अर्थवान बन ाती है। उदय प्रकाश प्रतीकों के सहारे समा ा, संस्कृति, भाषा, रा ानीति, शासन व्यवस्था तथा लोक ीवन तक को रेखांकित कर ाते हैं।

अंत में उदय प्रकाश की भाषा शैली के विषय में थोड़ा वि ार करना अपेक्षित ान पड़ता है। क्योंकि भाषा एवं शैली ही वह माध्यम है ि ासके द्वारा वह समा ा की समस्याओं को मूर्त करता है। उदय प्रकाश अपनी व्यंग्यात्मक भाषा के द्वारा भूमंडलीय व्यवस्थाके विद्रूप ोहरे को आम ान के सामने लाते हैं। उनकी भाषा के विषय ो ध्यान देनेवाली बात है वह यह कि उनकी भाषा आ ा की कहानी के प्र ालित गद्य से अलग है। इनकी भाषा में व्यंग्य की प्रधानता होने के कारण कहानियाँ फिल्मों की तरह पाठक को अंतिम क्षण तक बाँधे रखती है और पाठक के हृदय में कूतूहल पैदा करती हैं। उनकी भाषा पुरानी ाड़ पड़ ुकी भाषा के तंग दायरे को तोड़ती हुई दिखाई देती है और एक नई भाषा-शिल्प के गठन का एहसास कराती है।

उदय प्रकाश एक कवि भी हैं और यह बात कहानी लिखते समय पूरी तरह भूल नहीं पाते। इसलिए आकर्षण बिंबों, उपमानों, तुलनाओं का मोह छोड़ नहीं पाते। शायद यही कारण है कि कहानी में फंतासी का रूप पूरी गहराई के साथ व्यक्त हुआ है। उनकी व्यंग्यात्मक उपहास भरी भाषा अधिकांश स्थलों पर सामाि ाक

समस्याओं को ित्रित करने में पूर्णतः सफल हुई है। ‘दद्दू तिवारीःगणनाधिकारी’ कहानी के इस हिस्से को देखिए-"आठवें द ों में एक साल डुबकी लगा लेने पर दद्दू तिवारी पर भीषण सोंटा-वर्षण हुआ था। अगर त्रेता या सतयुग रहा होता तो दद्दू ‘त्राहि माम्। त्राहि माम्’ कहकर रोते। यह कलि का असर था कि उनके मुँह से "अरे दौड़ो रे, बप्पा ने मार डाला... मार डाला... माड् डाला... रे। ैसी भाषा निकल रही थी।"[49]

ैसे रंगमं । पर अभिनेता की एक-एक अंग भंगिमा, उसकी एक-एक गति और प्रकाश के इधर या उधर पड़ने का अलग-अलग अर्थ और इशारा होता है, वैसे ही कहानी का एक-एक शब्द, एक-एक वाक्य किसी संकेत, किसी अर्थ को छिपाए होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उदय प्रकाश की भाषा में नाटकीय अंदा ।, काव्यात्मक शैली और फिल्मी लह ो का अद्भुत समन्वय हुआ है। और यही कारण है कि वह भूमंडलीकरण के मुख्य विस्तारक ‘बा ार, पूँ ीवाद, संप्रदायवाद, मीडिया, ागत’ की प्रत्येक गतिविधि को बदलते समा िक परिदृश्य में व्यंग्य की आँख से देखने का काम करती है और अपने इस कार्य में वह काफी हद तक सफल भी हुई है।

अंततः कहा ा सकता है कि उदय प्रकाश की कहानियों का न केवल ाँ ा युगानुरूप है अपितु उसकी भाषा एवं शिल्प विधान भी। कहने की आवश्यकता नहीं कि उनकी कहानियों में भूमंडलीकरण के मुख्य घटक-बा ार, मीडिया, संप्रदायवाद, नव्य पूँ ीवाद एवं सांस्कृतिक व स्वि आदि की समय एवं समा । सापेक्ष ो अभिव्यक्ति हुई है, उसमें लेखक की अंतर्दष्टि के साथ-साथ उनकी भाषा एवं शैली का भी अहम् योगदान रहा है।

* * *

संदर्भ

[1] उदय प्रकाश, मैं और मेरा समय, कथादेश, मा ि 1997-पृ.6
[2] उदय प्रकाश, पीली छतरी वाली लड़की-पृ.12
[3] उदय प्रकाश, पीली छतरी वाली लड़की-पृ.20-21
[4] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.37
[5] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.52-53
[6] उदय प्रकाश, मोहनदास-पृ.28
[7] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.64
[8] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.37-38
[9] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.38
[10] उदय प्रकाश, तिरिछ, राम स ीवन की प्रेमकथा-पृ.102-103
[11] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.133
[12] उदय प्रकाश, मैं और मेरा समय, कथादेश, मा ि 1997-पृ.7
[13] उदय प्रकाश, मैं और मेरा समय, कथादेश, मा ि 1997-पृ.8
[14] उदय प्रकाश, मोहनदास-पृ.63
[15] उदय प्रकाश, मोहनदास-पृ.62
[16] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना-पृ.118
[17] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.26
[18] उदय प्रकाश, हीरालाल का भूत-पृ.126
[19] उदय प्रकाश, हीरालाल का भूत-पृ.128
[20] उदय प्रकाश, मोहनदास-पृ.61
[21] उदय प्रकाश, मोहनदास-पृ.65
[22] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना-पृ.72
[23] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना, सही उत्तर-पृ.69
[24] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना, और अंत में प्रार्थना-पृ.137
[25] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना-पृ.145
[26] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना-पृ.141
[27] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना-पृ.138
[28] उदय प्रकाश, और अंत में प्रार्थना-पृ.129-130
[29] उदय प्रकाश, दत्तात्रेय के दुख, दिल्ली-पृ.35-36
[30] उदय प्रकाश, दत्तात्रेय के दुःख, दिल्ली-पृ.30-37
[31] उदय प्रकाश, दत्तात्रेय के दुख, दिल्ली-पृ.38
[32] उदय प्रकाश, दत्तात्रेय के दुःख, आ ार्य की र ाई-पृ.51
[33] उदय प्रकाश, दत्तात्रेय के दुःख, असत्य का भौतिक प्रमाण-पृ.15
[34] उदय प्रकाश, दत्तात्रेय के दुःख, दिल्ली की दीवार-पृ.58
[35] कथन, ानवरी-मा ि 2001, प्रधान संपादक, रमेश उपाध्याय-पृ.44
[36] उदय प्रकाश, मैंगोसिल-पृ.80
[37] उदय प्रकाश, मैंगोसिल-पृ.81
[38] उदय प्रकाश, मैंगोसिल-पृ.176-177
[39] उदय प्रकाश, मैंगोसिल-पृ.177
[40] उदय प्रकाश, मोहनदास-पृ.82

[41] उदय प्रकाश, तिरिछ, छप्पन तोले का करधन-पृ.52
[42] उदय प्रकाश, तिरिछ, छप्पन तोले का करधन-पृ.60
[43] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर, भाई का सत्याग्रह-पृ.92
[44] उदय प्रकाश, पालगोमरा का स्कूटर-पृ.61
[45] उदय प्रकाश, तिरिछ, छप्पन तोले का करधन-पृ.59
[46] उदय प्रकाश, तिरिछ, छप्पन तोले का करधन-पृ.62
[47] उदय प्रकाश, तिरिछ-पृ.46-47
[48] उदय प्रकाश, मोहनदास-पृ.62
[49] उदय प्रकाश, तिरिछ, दद्दू तिवारी : गणनाधिकारी-पृ.86

उपसंहार

उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति पर वि ार करने का मुख्य प्रयो ान उन दोषों को लक्षित करना है, ि ासके कारण समा ा का स्वाभाविक एवं सह ा विकास अब तक बाधित होता रहा है। समा ा पर बु ुआ वर्ग का प्रभुत्व निरंतर बने रहने के कारण आम ान उन सुविधाओं एवं संसाधनों से आ ा तक वं ाित रहा है, ि ास पर कि उसका भी अधिकार होना ााहिए था। भूमंडलीकरण ने समा ा और साहित्य को किस प्रकार प्रभावित किया है तथा समा ा और साहित्य ने उसे किस प्रकार ग्रहण किया है और उस पर प्रतिक्रिया की है, इन सबको ाानने-सम ाने के लिए उदय प्रकाश के कथा साहित्य से बेहतर र ाना संसार समकाल में कहाँ मिल सकता है।

पहले अध्याय ‘उदय प्रकाश का व्यक्तितत्व एवं कृतित्व’ के माध्यम से लेखक के व्यक्तितत्व पर पड़नेवाले प्रभाव और उसके र ाना कर्म के बी ा संबंध की खो ा की गई है। साथ ही उनकी र ानाओं पर तत्कालीन प्रभाव की भी व्याख्या की गयी है। उनका व्यक्तितत्व उनके र ानाकर्म को सम ाने में सहायक है।

‘भूमंडलीकरण की अवधारणा’ अध्याय में भूमंडलीकरण का अर्थ, परिभाषा एवं उसके स्वरूप पर वि ार किया गया है। इसके साथ-साथ यह दिखाने की कोशिश की गयी है कि भूमंडलीकरण का प्रभाव समा ा एवं साहित्य पर किन-किन रूपों में पड़ा है तथा उसके सकारात्मक एवं नकारात्मक परिणामों की संक्षिप्त ा ार्ा की गई है। भूमंडलीकरण के ाो भी लाभ हैं वह देश-दुनिया के केवल प्रभुत्वशाली कहे ाानेवाले मुट्ठी भर लोगों के लिए हैं। संसार के ये मुट्ठी भर लोग कौन हैं इसका उल्लेख अध्याय के भीतर किया गया है। आ ा दुनियाँ भर के भौतिक संसाधनों पर कब ाा मह ा 2% लोगों का है। ये 2% लोग दुनियाँ के किस कोने में रहते हैं, इनका संबंध किन खास व्यापारों से है आदि का विधिवत वर्णन किया गया है। भूमंडलीकरण के मुख्य फेनोमिना क्या है, ये अपना माल कहाँ बे ाते हैं, ये किस

प्रकार का सांस्कृतिक व र्स्व गरीब देशों पर बना रहे हैं, आदि का विश्लेषण और मूल्यांकन किया गया है। उ ा विकसित कहे ाने वाले राष्ट्र गरीब देशों की छोटी भाषाओं पर कैसे अपना भाषाई व र्स्व बना रहे हैं, कैसे इनके प्रभावों से लोकभाषाएँ तेज़ी से मरती ा रही है, कैसे लोक गीतों और लोक कलाओं की परंपरा पॉप या पॉपुलर कल ार में बदल रही है। आदि का भी विश्लेषण किया गया है।

तीसरे अध्याय 'हिंदी कहानियाँ और भूमंडलीकरण' में पहले हिंदी कहानियों की विकास यात्रा का संक्षिप्त परि ाय दिया गया है फिर यह देखने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार हिंदी कहानियों में भूमंडलीकरण का प्रवेश हुआ। भूमंडलीकरण ने हिंदी कहानी के किन-किन अंगों को प्रभावित किया तथा हिंदी कहानियों में भूमंडलीकरण का स्वरूप किन-किन रूपों में व्यक्त हुआ है आदि का सोदाहरण विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय में सन् 70 के बाद की कहानियों में भूमंडलीकरण के संबंध एवं प्रभाव की ा र्ा की गयी है।

इसमें यह देखने का प्रयास किया गया है कि-बा ारवाद, संप्रदायवाद, नव्य पूँ ीवाद, प्रमुख औद्योगिक निकाय एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ और मीड़िया ने समा ा को किस हद तक प्रभावित किया है। इन भिन्न-भिन्न भूमंडलीय तत्वों से संबंधित कहानियों में व्यक्त इनके स्वरूपों का ित्रण भी किया गया है साथ ही भूमंडलीकरण के व्यापक प्रभाव की ा र्ा भी की गयी है। कुल मिलाकर हिंदी कहानियों में भूमंडलीकरण किन-किन रूपों व्यक्त हुआ है, उसका व्यापक परिणाम समा ा एवं ान सामान्य पर क्या पड़ा है इत्यादि का विवे ान विश्लेषण इस अध्याय का मूल उद्देश्य रहा है।

अंतिम अध्याय 'उदय प्रकाश की कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति' के अंतर्गत उन्हीं कहानियों को शामिल किया गया है िान कहानियों में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति व्यापक पैमाने पर हुई है। प्रारंभ में ही इन कहानियों का विवरण दिया गया है। इस अध्याय में उन तमाम सवालों को खो ाने का प्रयास किया गया है ाो भूमंडलीकरण से संबंध रखते हैं। भूमंडलीकरण के विभिन्न घटक किस रूप में उदय

प्रकाश की कहानियों में व्यक्त हुए हैं इसका ि त्रण का इस अध्याय का मुख्य प्रयो ान रहा है।

वर्तमान समय में भूमंडलीकरण के प्रभाववश सामाि क एवं मानवीय मूल्यों में आये परिवर्तन, स्त्री-पुरुष संबंध, परंपरा की तलाश, वृद्धा माँ की विवशता, पूँ ीवाद का व स्वि आदि कई सवालों को इन कहानियों में खो ने का प्रयास किया गया है।

प्राकृतिक आवासों के गायब होने का कारण, नदियों के ते ी से सूखते ाने की व ाह, खेती से किसानों का मोहभंग, मनुष्य की संवेदनहीनता की व ाह, गरीबी की ागह गरीबों को मिटाना, स्त्रियों का माल (वस्तु) के रूप में रूपांतरण, समा ा के मूल ाँ ो के बिखराव का कारण इत्यादि समस्याओं को न केवल उ ागर करती हैं, बल्कि इनसे लड़ती भी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वे तमाम सवालात ो अब तक के कहानीकारों से छूट गये थे, उन्हें उदय प्रकाश गहराई से पकड़ते हैं। इन सवालों को पकड़ने में कई बार कहानी के और समा ा के पारंपरिक प्रतिमानों को तोड़ना भी पड़ा है। यह भी सत्य है कि विरोध के बिना विकास संभव नहीं होता, यही बात उदय प्रकाश की कहानियों के साथ भी लागू होती है।

उदय प्रकाश अन्य र ानाकारों की तरह तत्कालीन सामाि क, रा ानीतिक व्यवस्थाओं से ताल-मेल बिठाकर ालनेवाले र ानाकार नहीं, वे ालते हैं युगीन समस्याओं के साथ, ालते हैं उस व्यवस्था के विरोध में ो आम ान से कोई सरोकार नहीं रखतीं। उनकी कहानियों का कथात्मक ाँ ाा उतना ही ऊबड़-खाबड़ है ि ातना कि आम ानता के सामाि क ीवन का।

पूँ ी और सत्ता के सा ाा मेल से निर्मित वर्तमान वैश्विक व्यवस्था-ि ासे भूमंडलीय अवस्था कहा ााता है-के विषय में लेखक की अपनी स्पष्ट सम ा है और यही सम ा उनकी कहानियों में वैविध्यता का समावेश करती है, साथ ही साथ उन अनछुए प्रसंगों की उद्‌भावना करती है ि ासका ि त्रण समा ा को उ ि ात दिशा देने के लिए वेशकीमती है।

उनकी कहानियों में 'समा ा का हाशिया और हाशिए का समा ा' अपनी ि ास ीवंतता के साथ व्यक्त हुआ है वह हिंदी कहानी ागत में एक प्रतिमान है, साथ ही समकालीन कहानीकारों के समक्ष एक ुनौती भी।

उदय प्रकाश की कहानियाँ वर्तमान भूमंडलीय व्यवस्था के समक्ष लोकतांत्रिक व्यवस्था की माँग, व र्स्ववादी शक्तियों का विरोध, समा ा के मूल ाँ ो को ब ाए रखने की ि ंता और अपील ही नहीं करती हैं बल्कि एक बेहतर दुनिया को बनाने का ु ाारू र ानात्मक संघर्ष भी करती हैं। उदय प्रकाश शब्द की आँखों से सिर्फ सपने नहीं देखते, शब्दबोधा की तलवार की धार है ि ास पर उदय प्रकाश का र ानाकार नंगे पैर ालता है। उधर ि ाधर हाहाकार है, उसी तरफ इस र ानाकार का घर है।

* * *

संदर्भ ग्रंथ सू ी

आधार ग्रंथ

क्र. सं.	पुस्तक/कहानी/संग्रह का नाम	लेखक/लेखिका का नाम	प्रकाशक	वर्ष
1	तिरिछ (कहानी संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	1989
2	दरियाई घोड़ा (कहानी संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	1989
3	और अंत में प्रार्थना (कहानी संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	1994
4	पाल गोमरा का स्कूटर (कहानी संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	1997
5	पीली छतरी वाली लड़की (कहानी)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2001
6	दत्तात्रेय के दुःख (कहानी संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2002
7	अरेबा-परेबा (कहानी संग्रह)	उदय प्रकाश	पेंगुइन बुक्स इंडिया (यात्रा बुक्स के सहयोग से)	2006
8	मोहनदास	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2006
9	मैंगोसिल	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2006

सहायक ग्रंथ

क्र. सं.	पुस्तक/कहानी/ संग्रह का नाम	लेखक/लेखिका	प्रकाशक	वर्ष
1	कहानी के नये प्रतिमान	डॉ.कुमार कृष्ण	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2005
2	भूमंडलीकरण वि ार, नीतियाँ और विकल्प	कमल नयन काबरा	प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली	2005
3	बा ार के बी ा बा ार के खिलाफ	प्रभा खेतान	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2004
4	भारत का भूमंडलीकरण	अभय कुमार दूबे (संपादक)	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2003
5	भूमंडलीकरण की ुनौतियाँ	स ादानंद सिंहा	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2005
6	भूमंडलीकरण के युग में पूँ ीवाद	समीर अमीन	श्याम बिहारी राय द्वारा ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) दिल्ली	2003

7	पिता दर पिता (कहानी)	रमेश बक्षी	रूपांबरा प्रकाशन, कलकत्ता	1971
8	सुनो कारीगर (कविता संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	1980
9	अबूतर कबूतर (कविता संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	1984
10	रात में हारमोनियम (कविता संग्रह)	उदय प्रकाश	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	1998
11	भाषा और भूमंडलीकरण	मैने ार पाण्डेय से साक्षात्कार	शब्द संधान प्रकाशन, दिल्ली	2008
12	हिंदी कहानी का विकास	मधुरेश	सुमित प्रकाशन, 107/177, अलोपी बाग, इलाहाबाद-211001	1996
13	हिंदी साहित्य का इतिहास	डॉ.नगेंद्र, डॉ.हरदयाल	मयूर पेपर बैक्स, ए-95, सेक्टर-5, नोएडा-201301	तीसरा संस्करण 2009

पत्र-पत्रिकाएँ

1. आलो ाना, ानवरी-मा ि 2001, सहस्त्राब्दी अंक-4, प्रधान संपादक, नामवर सिंह, संपादक-परमानंद श्रीवास्तव
2. आलो ाना, ानवरी-मा ि 2004, सहस्त्राब्दी अंक-16, प्रधान संपादक, नामवर सिंह, संपादक-परमानंद श्रीवास्तव
3. समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर-दिसंबर 2008, अरुण प्रकाश
4. कथादेश, मा ि 2007, हरिनारायण
5. उद्भावना, अक्टूबर 06, मा ि 07, अ ाेय कुमार
6. इतिहास बोध, ानवरी 2006
7. वागर्थ, दिसंबर 2003, वि ाय बहादुर सिंह
8. कथादेश, ानवरी 2010, हरिनारायण
9. वाक् पत्रिका, फरवरी 2010, सुधीश प ाौरी
10. कथन, ानवरी-मा ि 2001, रमेश उपाध्याय, संज्ञा उपाध्याय
11. हंस, अगस्त 2006, रा ाेंद्र यादव

12. संबोधन, अप्रैल- ून 2007

13. नया ज्ञानोदय, ून 2008, रवींद्र कालिया

14. हंस, फरवरी 2010, रा ोंद्र यादव

15. हिंदुस्तानी अंक 4, भाग 70

16. हंस, मई 2008, रा ोंद्र यादव

17. प्रगतिशील वसुधा (79), वर्ष-5, संख्या-3 (समकालीन कहानी विशेषांक-1) प्रधान संपादक (कमला प्रसाद), संपादक (स्वयं प्रकाश, रा ोंद्र शर्मा)

18. प्रगतिशील वसुधा (80), वर्ष-5, संख्या-4, (समकालीन कहानी विशेषांक-2) प्रधान संपादक-कमला प्रसाद, संपादक-स्वयं प्रकाश, रा ोंद्र शर्मा)

19. हिंदुस्तानी अंक-5, भाग-70

20. सारिका, फरवरी 1972, कमलेश्वर

21. कहानी, ून 1973, श्रीपत राय

22. कथाक्रम, ानवरी-मा र् 2001, शैलेंद्र सागर

23. कथन, ुलाई-सितंबर 2002, रमेश उपाध्याय, संज्ञा उपाध्याय

24. कथादेश, मा र् 1997, हरिनारायण

* * *